खण्ड `अ' व्याकरण खण्ड

अध्याय-1

निबन्ध लेखन

निबंध का अर्थ

निबंध एक क्रमबद्ध साहित्यिक रचना का स्वरूप है, जिसकी सर्जना सामान्यतया गद्य में होती है। वास्तव में, निबंध एक बौद्धिक मानवीय अभ्यास है, जिसकी भाषा शैली सुस्पष्ट एवं प्रवाहपूर्ण होती है। 'निबंध' शब्द नि एवं बंध दो शब्दों से बना है, जिसका तात्पर्य है—सम्यक् रूप से बँधी हुई गद्य रचना या लेख। हिन्दी के शब्द 'निबंध' को अंग्रेजी के 'Essay' सामान्यता शब्द का पर्याय माना जाता है और अंग्रेजी के 'Essay' शब्द का अर्थ होता है— विषय विशेष पर एक छोटा लेख।

निबंध की परिभाषा

''निबंध एक साहित्यिक रचना है, जो किसी विषय पर हो सकती है और जो साधारणत: लघु तथा गद्य में होती है।''

हिन्दी के प्रसिद्ध लेखक श्यामसुन्दरदास की निबंध विषयक परिभाषा है—''निबंध वह लेख है, जिसमें किसी गहन विषय पर विस्तृत और पांडित्यपूर्ण विचार किया जाता है।''

निबंध के अंग

निबंध लेखन एक कला है। एक श्रेष्ठ निबंध रचना के निम्नलिखित अंग होते हैं—

भूमिका—भूमिका निबंध का महत्त्वपूर्ण अंग है। इसे 'विषय-प्रवेश, अथवा 'प्रस्तावना' भी कहा जा सकता है। 'भूमिका' या 'प्रस्तावना के अन्तर्गत विषय का परिचय दिया जाता है। भूमिका बहुत बड़ी नहीं होनी चाहिए।

विषय का विस्तार—विषय-परिचय के पश्चात् विषय का विस्तार किया जाता है। यह अंश निबंध का मध्य भाग कहलाता है। इसमें विषय से संबंधित जो भी सामग्री होती है, उसे क्रमबद्ध रूप से अलग-अलग अनुच्छेदों में विभाजित करके प्रस्तुत किया जाता है तथा प्रत्येक अनुच्छेद एक-दूसरे से अच्छी तरह जुड़ा होना चाहिए।

उपसंहार—निबंध का अंतिम भाग 'उपसंहार,' 'निष्कर्ष' अथवा 'समापन' कहलाता है इस भाग के अंतर्गत निबंध में कही गई बातों को सारांश रूप में प्रकट किया जाता है।

निबंध के प्रकार

निबंध-विषयों के क्षेत्र अत्यंत व्यापक हैं। मानव समाज, इतिहास, भूगोल, जीव-जंतु, पशु-पक्षी, गाँव, यात्रा, आत्मकथा तथा मन व प्रवृत्तियाँ, आदि किसी भी विषय पर निबंध लिखा जा सकता है।

विषय और उद्देश्य की दृष्टि से निबंध चार प्रकार के होते हैं—

(i) वर्णनात्मक निबंध, **(ii)** विचारात्मक निबंध **(iii)** भावात्मक निबंध, **(iv)** व्याख्यात्मक निबंध।

(i) वर्णनात्मक निबंध—इस प्रकार के निबंधों में महत्त्वपूर्ण महापुरुषों, उत्सवों, नगरों, दृश्यों, ऋतुओं, आदि का वर्णन किया जाता है। इन निबंधों में 'वर्णन' की प्रधानता रहती है। इन्हें विवरणात्मक निबंध भी कहते हैं; जैसे—मेरे सपनों का भारत, यात्रा-वृत्तांत, भारत की ऋतुएँ, भारतीय त्योहार-होली, दीवाली, दशहरा, आदि।

(ii) विचारात्मक निबंध—कुछ ऐसे विषय होते हैं जिन पर हम अपने विचार इस प्रकार प्रकट करते हैं कि वे विषय मानव समाज के लिए लाभकारी हैं या हानिकारक? इनमें विचारों की प्रधानता हो जाने के कारण ऐसे निबंध विचारात्मक निबंध कहलाते हैं; जैसे—नारी की सामाजिक स्थिति, शिक्षा का गिरता स्तर, सार्वजनिक जीवन में हिंसा, आदि।

(iii) भावात्मक निबंध—भावात्मक निबंधों में भाव को प्रधानता दी जाती है। भाव का संबंध हृदय से है। इसमें लेखक अपने भावुक मन से मनचाही अभिव्यक्ति प्रस्तुत करने के लिए स्वतंत्र होता है; जैसे—भारत माता ग्रामवासिनी, मेरा प्रिय कवि, दया धर्म का मूल है, मित्रता आदि।

(iv) व्याख्यात्मक निबंध—इस प्रकार के निबंधों के अन्तर्गत आने वाले विषयों में कार्य-कारण संबंध दिखाकर एक घटना के पश्चात् क्रमश: दूसरी एवं तीसरी घटना का विवरण प्रस्तुत किया जाता है, इसमें क्रम की शृंखला कहीं भी टूटने नहीं दी जाती है। इनमें पौराणिक, ऐतिहासिक धार्मिक कथा और गाथाओं का समावेश रहता है।

निबन्ध लेखन की भाषा-शैली

भाषा—शैली निबंध लेखन का आवश्यक और महत्त्वपूर्ण तत्व है। विषय और विचारों के अनुसार भाषा—शैली भी बदलती रहती हैं। निबंध लिखते समय सरल, सहज लेकिन प्रभावोत्पादक भाषा का प्रयोग किया जाना चाहिए। भाषा सरल एवं सहज तो हो पर विषयानुरूप भी होनी चाहिए।

(i) शब्दों का चयन विषयानुकूल एवं प्रसंगानुकूल हो।
(ii) शब्दों के चयन में सहजता, सजीवता, रोचकता, अर्थबोधता, आदि गुण पर्याप्त होने चाहिए।
(iii) कठिन एवं संस्कृतनिष्ठ शब्दों से बचना चाहिए।
(iv) सामासिक पदों एवं संधियों से अर्थ-प्रवाह में बाधा उत्पन्न न हो।
(v) निबंध लिखते समय भाषा को मुहावरेदार एवं आलंकारिक बनाने की समुचित कोशिश करनी चाहिए।

निबंध में प्रयुक्त होने वाले विशिष्ट पद या वाक्य

विभिन्न निबंधों के अंतर्गत विविध सूक्तियों, श्लोकों, लोकोक्तियों व महापुरुषों के कथनों आदि का प्रयोग करके भाव एवं भाषा को प्रभावी बनाने का प्रयास किया जाना चाहिए। विद्यार्थियों की सुविधा के लिए यहाँ कुछ प्रचलित सूक्तियाँ, श्लोक, लोकोक्तियाँ और महापुरुषों के वचन प्रस्तुत किए जा रहे हैं, जिन्हें उद्धृत कर विद्यार्थी निबंध लेखन को श्रेष्ठ बना सकते हैं।

सूक्तियाँ—

- मजहब नहीं सिखाता, आपस में बैर रखना।
  अर्थात् मजहब (धर्म) आपस में लड़ना नहीं सिखाता।
- पराधीन सपनेहुँ सुख नाहिं।
  अर्थात्—पराधीन व्यक्ति को स्वप्न में भी सुख नहीं मिलता।
- सकल पदारथ हैं जग माहीं। करम हीन नर पावत नाहीं।
  अर्थात्—इस संसार में सब कुछ मौजूद है, लेकिन कर्महीन व्यक्ति को वह प्राप्त नहीं होता।
- 'विद्या धनं सर्व धनं प्रधानम्'
  अर्थात्—विद्या धन सभी धनों में प्रधान है।
- 'जननी जन्मभूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी'
  अर्थात् जननी और जन्म भूमि स्वर्ग से भी बढ़कर हैं।
- 'यत्र नार्यस्तु पूज्यंते रमंते तत्र देवता:'
  अर्थात्—जहाँ नारी की पूजा की जाती है वहाँ देवता निवास करते हैं।
- कमान से निकला तीर और मुँह से निकली बात वापस नहीं आती।
- महत्त्वाकांक्षा का मोती, निष्ठुरता की सीपी में पलता है।
- घर का जोगी जोगणा, आन गाँव का सिद्ध।
- वही मनुष्य है कि जो मनुष्य के लिए मरे।

श्लोक—
- येषां न विद्या न तपो न दानम्,
  ज्ञानं न शीलम् न गुणो न धर्म:।
  ते मृत्युलोके भुवि भार भूता:
  मनुष्य रूपेण मृगाश्चरन्ति।।

अर्थात्—ऐसे मनुष्य जिनके पास न विद्या है, न तप है, न दान है, न ज्ञान है, न शील है, न कोई और गुण है और न धर्म है वे पृथ्वी पर भार रूप होकर पशु के समान चलते फिरते हैं।

- विद्या बंधुजनो विदेश गमने विद्या परा देवता।
  विद्या राज सू पूज्यते नहिं धनं विद्या विहीन पशु।।

अर्थात्—विदेश जाने में विद्या बंधुओं के समान है। विद्या परम देवता है राजा विद्या की पूजा करता है, न कि धन की। अत: विद्या से रहित मनुष्य पशु (के समान) है।

- उद्यम : साहस : धैर्य : बुद्धि: शक्ति पराक्रम:।
  षडेते यत्र वर्तंते तत्र देव: सहायक:।।

अर्थात्—जहाँ पर ये छ: गुण-उद्यम, साहस धैर्य, बुद्धि, बल, तथा वीरता होते हैं, वहाँ ईश्वर भी सहायता करता है।

- विद्या नाम नरस्य रूपमधिकं प्रच्छन्न गुप्तं धनं। विद्या भोगकारी यश: सुखकरी विद्या गुरूणां गुरु।।

अर्थात्—विद्या मनुष्य का श्रेष्ठ रूप है, ढका हुआ गुप्त धन है। विद्या भोग, यश और सुख उत्पन्न करने वाली है। विद्या गुरुओं की भी गुरु है।

लोकोक्तियाँ

- अब पछताए होत का जब चिड़िया चुग गई खेत।
  अर्थात्—समय निकल जाने पर प्रयत्नशील होना व्यर्थ है।
- आँख का अंधा गाँठ का पूरा
  अर्थात्—धनवान किंतु अत्यधिक मूर्ख।
- आए थे हरिभजन को ओटन लगे कपास
  अर्थात्—प्रमुख कार्य या उद्देश्य को छोड़कर अन्य कार्य में लग जाना।
- अजगर करे न चाकरी पंछी करे न काम
  अर्थात्—ईश्वर सबकी आवश्यकताएँ पूरी करता है।
- करमहीन खेती करे, बैल मरे या सूखा पड़े
  अर्थात्—दुर्भाग्य होने पर सभी काम बिगड़ते हैं।
- अंधा बाँटे रेवड़ी फिर-फिर अपने को दे
  अर्थात्—सारा लाभ स्वयं लेना।

कुछ महापुरुषों के वचन

- उठो जागो और लक्ष्य तक मत रुको।—स्वामी विवेकानन्द
- स्वतंत्र वही होता है जो अपना काम स्वयं कर लेता है। —विनोबाभावे
- तपस्या धर्म का पहला और आखिरी कदम है। —महात्मा गाँधी
- विश्वास वह पक्षी है जो प्रभात के पूर्व अंधकार में ही प्रकाश अनुभव कराता है और गाने लगता है। —रवीन्द्रनाथ टैगोर
- जहाँ तक दिखाई दे वहाँ तक जाइए, जब आप वहाँ पहुँचेंगे तभी आगे दिखाई देगा। —जेपी मार्गन
- गरीबी क्रांति और अपराध को जन्म देने वाली प्रवृत्ति है। —अरस्तू
- व्यवहार एक दर्पण है जो हर कहीं आपके मानसिक प्रतिबिंब को सामने रख देता है। —गोर्की
- याद रखो सबसे बड़ा अपराध अन्याय के विरोध में आवाज नहीं उठाना है और गलत को सहन कर लेना है। —सुभाष चन्द्र बोस
- जिस प्रकार बिना जल के धान नहीं उगता उसी प्रकार बिना विनय के प्राप्त की गई विद्या फलदायी नहीं होती। —भगवान महावीर

निबंध लेखन में ध्यान देने योग्य बातें

निबन्ध किसे कहते हैं—निबन्ध ऐसी रचना है जिसमें विचार भाव, घटना आदि को सधी और कसी भाषा में व्यक्त किया जाता है,इसमें यथास्थान उद्धरणों, दृष्टान्तों, प्रसंगों एवं सूक्तियों का प्रयोग किया जाता है।

(i) सर्वप्रथम विचार के अनुसार सामग्री का चयन और क्रमयोजन करें।
(ii) प्रत्येक विचार बिन्दु को अपनी भाषा में प्रस्तुत करें।
(iii) विषय के सभी पहलुओं को तर्कसंगत ढंग से प्रस्तुत करें।
(iv) छोटे-छोटे सुसंगठित वाक्यों का प्रयोग करें।
(v) शुद्ध, स्पष्ट, प्रवाहपूर्ण भाषा का प्रयोग करें।

❑❑

अध्याय-2
अपठित गद्यांश

अपठित गद्यांश को देने का उद्देश्य

1. विद्यार्थियों की अर्थग्रहण क्षमता में वृद्धि हो सके।
2. विद्यार्थियों की भाषा एवं शैली के बीच अंत: संबंध को खोजने संबंधी क्षमता में वृद्धि की जा सके।
3. विद्यार्थियों के बौद्धिक स्तर का परीक्षण किया जा सके।
4. विद्यार्थियों की विश्लेषण क्षमता को समृद्ध किया जा सके।

5. विद्यार्थियों की अभिव्यक्ति क्षमता का विकास किया जा सके।
6. विद्यार्थियों की अध्ययनशीलता, एकाग्रता तथा संवेदनशीलता का परीक्षण किया जा सके।

'अपठित' का सामान्य अर्थ है—'बिना पढ़ा हुआ' अर्थात् जो नियमित अध्ययन के लिए निर्धारित पाठ्यपुस्तक का हिस्सा न हो। इस प्रकार 'अपठित' वे रचना-अंश होते हैं, जिन्हें गद्य या पद्य के रूप में हमने पहले न पढ़ा हो। ये विचार प्रधान गद्यांश अथवा काव्यांश होते हैं।

अपठित का महत्त्व

अपठित रचनाओं का अपना विशिष्ट महत्त्व होता है। इसी कारण इन्हें प्रश्न-पत्र का भाग बनाया जाता है।

1. अपठित रचनाएँ भाषा, लेखन-शैली तथा शब्द-भंडार को बढ़ाने में भी सहायक होती हैं। इनके अंतर्गत मुहावरे, लोकोक्तियाँ, सूक्तियाँ इत्यादि की समझ हमारी भाषिक क्षमता को उत्कृष्ट तथा अभिव्यक्ति क्षमता को उत्तम बनाती है।
2. अपठित बोध से विचार चिंतन तथा अवलोकन के गुणों का विस्तार होता है। इसके द्वारा विद्यार्थी किसी रचना को समझने तथा उस पर अपने विचार देने में सफ़ल होते हैं।
3. अपठित बोध का अभ्यास स्वाध्याय की भावना विकसित करता है। इससे पढ़ने के प्रति स्वाभाविक रुचि पैदा होती है।
4. अपठित बोध के अन्तर्गत अपठित गद्यांश व काव्यांश से सम्बन्धित प्रश्न पूछे जाते हैं।

अपठित गद्यांश का अर्थ

'गद्य का ऐसा अंश, जिसे पहले नहीं पढ़ा गया हो' अपठित गद्यांश कहा जाता है। अपठित गद्यांश का मुख्य उद्देश्य किसी भी विषय को समझने, उसका संपूर्ण अर्थों में विश्लेषण करने तथा भाषा एवं शैली के बीच के संबंधों को खोजने संबंधी विद्यार्थियों की क्षमता को परखना होता है। उन्हें शाब्दिक अर्थ के साथ-साथ भावार्थ को भी समझना चाहिए। भावार्थ को समझना पाठ बोध के लिए अत्यन्त आवश्यक है।

पाठ्यपुस्तकों पर आधारित गद्यांशों के उत्तर देना अधिक सरल होता है, किन्तु अपठित गद्यांश का उत्तर देना पठित गद्यांशों की तुलना में कठिन होता हैं, क्योंकि यह निर्धारित पाठ्यक्रम का अंश नहीं होता है। इस प्रकार के गद्यांश प्राय: हिन्दी की विभिन्न पुस्तकों, पत्र-पत्रिकाओं, समाचार-पत्रों आदि से चुने जाते हैं।

अपठित गद्यांश को समझना

गद्यांश के शाब्दिक अर्थ एवं भावार्थ को ठीक से समझने के लिए भाषा के व्याकरण की जानकारी होना आवश्यक है जिसके लिए विलोम शब्द, पर्यायवाची शब्द, संज्ञा, सर्वनाम, विशेषण, प्रविशेषण, विराम-चिह्न प्रयोग, श्रुतिसम भिन्नार्थक शब्द, अनेक शब्दों के लिए एक शब्द, मुहावरे, लोकोक्तियाँ, आदि का भी समुचित ज्ञान होना आवश्यक है।

अपठित गद्यांशों को हल करते समय ध्यान रखने योग्य बातें

1. दिए गए अपठित गद्यांश को ध्यानपूर्वक दो-तीन बार पढ़ना चाहिए। इससे उस गद्यांश के मूल भाव समझने में आसानी रहेगी।
2. गद्यांश में दिए गए कठिन शब्दों तथा पूछे गए प्रश्नों के सर्वाधिक उचित विकल्प को रेखांकित कर लेना चाहिए।
3. प्रत्येक प्रश्न का उत्तर गद्यांश में ही खोजना चाहिए।
4. उत्तर का चयन करते समय प्रसंग को ध्यान में अवश्य रखना चाहिए।
5. शीर्षक का चयन करते समय यह ध्यान रहे कि वह गद्यांश की मूल भावना को प्रकट करता हो।
6. शीर्षक का चयन करते समय प्रथम या अंतिम पंक्ति पर विशेष ध्यान देना चाहिए।
7. शीर्षक संक्षिप्त, आकर्षक एवं सार्थक होना चाहिए।
8. गद्यांश के प्रसंग में वाक्य अथवा शब्द के अर्थ को समझने का प्रयास करना चाहिए।

❑❑

अध्याय-3
व्याकरण

(I) वाक्यों की शुद्धि (शोधन)

कुछ लोग भाषा बोलने तथा लिखने में कई प्रकार की त्रुटियाँ करते हैं, इन त्रुटियों के मुख्य दो कारण होते हैं—

1. उच्चारण दोष

2. भाषा के व्याकरण के नियमों की सही जानकारी का अभाव।

1. उच्चारण दोष—भाषा की ध्वनियों को जिस प्रकार बोला जाता है, उसे उच्चारण कहते हैं। हिन्दी भाषा में उच्चारण का बहुत महत्त्व है; क्योंकि हिन्दी भाषा की विशेषता है कि इसे जैसा बोला जाता है, वैसा ही लिखा जाता है। अशुद्ध उच्चारण के कारण वर्तनी संबंधी अनेक अशुद्धियाँ पायी जाती हैं। इसमें कई बार वाक्य में शब्दों के अर्थ ही बदल जाते हैं। जैसे—

दिन के स्थान पर दीन
काम के स्थान पर कम
सुना के स्थान पर सूना
सेर के स्थान पर सैर
ओर के स्थान पर और
आदि के स्थान पर आदी।

स्वरों और व्यंजनों के अशुद्ध उच्चारणों के कारण वर्तनी संबंधी अनेक अशुद्धियाँ होती हैं।

2. भाषा के व्याकरण के नियमों की सही जानकारी का अभाव—व्याकरण के नियमों की सही जानकारी का अभाव-वाक्यगत या भाषा प्रयोग की अशुद्धियाँ भाषा के नियमों की सही जानकारी के अभाव के कारण होती हैं।

भाषा—प्रयोग संबंधी अशुद्धियों को निम्न प्रकार से विभाजित किया जा सकता है—

(क) लिंग संबंधी अशुद्धियाँ
(ख) वचन संबंधी अशुद्धियाँ
(ग) कारक संबंधी अशुद्धियाँ
(घ) सर्वनाम संबंधी अशुद्धियाँ
(ङ) क्रिया संबंधी अशुद्धियाँ
(च) शब्दक्रम संबंधी अशुद्धियाँ
(छ) पुनरुक्ति संबंधी अशुद्धियाँ
(ज) मुहावरों/लोकोक्तियों संबंधी अशुद्धियाँ
(झ) वाच्य संबंधी अशुद्धियाँ
(ञ) अविकारी रूपों संबंधी अशुद्धियाँ
(ट) अन्य अशुद्धियाँ

(क) लिंग संबंधी अशुद्धियाँ—इसके अन्तर्गत संज्ञा के लिंग रूपों तथा उनके अनुसार कर्ता, कर्म की क्रिया संबंधी अशुद्धियाँ आती हैं। जैसे—

	अशुद्ध वाक्य	**शुद्ध वाक्य**
1.	श्रीमती विमला विद्वान हैं।	श्रीमती विमला विदुषी हैं।
2.	मानसून आ गयी है।	मानसून आ गया है।
3.	भारत में वर्षा ऋतु तीन महीने रहता है।	भारत में वर्षा ऋतु तीन हैं महीने रहती है।
4.	श्रीराम, लक्ष्मण व सीता वन को गई।	श्रीराम, लक्ष्मण व सीता वन गए।

(ख) वचन संबंधी अशुद्धियाँ—वाक्य में क्रिया पदबंद, कर्ता, कर्म के वचन से प्रभावित होते हैं, विशेषण भी विशेष्य के वचन से प्रभावित होते हैं। इसकी यही जानकारी न होने के कारण अशुद्धियाँ होती हैं। कुछ संज्ञा शब्द जो नित्य एक वचन या बहुवचन में प्रयुक्त होते हैं, उनके संबंध में भी अशुद्धियाँ होती हैं, जैसे—

	अशुद्ध वाक्य	**शुद्ध वाक्य**
1.	अधिकारी ने हस्ताक्षर कर	अधिकारी ने हस्ताक्षर कर दिए दिए हैं।
2.	मुझसे मिलने अनेकों लोग आए।	मुझसे मिलने लोग आए।
3.	मैं आपका दर्शन करना चाहता था।	मैं आपके दर्शन करना चाहता था
4.	उसका प्राण पखेरू उड़ गया।	उसके प्राण पखेरू उड़ गए।

(ग) कारक संबंधी अशुद्धियाँ—

	अशुद्ध वाक्य	**शुद्ध वाक्य**
1.	हम यह फिल्म देखे थे।	हमने यह फिल्म देखी थी।
2.	यहाँ में सब ठीक-ठाक है।	यहाँ पर सब ठीक-ठाक है।
3.	वह छत पर गिर पड़ा।	वह छत से गिर पड़ा।
4.	अच्छी सीख ग्रहण करनी चाहिए।	अच्छी सीख को ग्रहण करना चाहिए।

(घ) सर्वनाम संबंधी अशुद्धियाँ—

	अशुद्ध वाक्य	**शुद्ध वाक्य**
1.	मैंने सब मालूम है।	मुझे सब मालूम है।

2. मेरे को कुछ नहीं बताना है। — मुझे कुछ नहीं बताना है।
3. उनकी नाम क्या है? — उनका नाम क्या है?

(ङ) क्रिया संबंधी अशुद्धियाँ—

अशुद्ध वाक्य	शुद्ध वाक्य
1. आप आराम से खाओ।	आप आराम से खाइए।
2. प्रवीन आपका बहुत सम्मान रखता है।	प्रवीन आपका बहुत सम्मान करता है।

(च) पुनरुक्ति संबंधी अशुद्धियाँ—

अशुद्ध वाक्य	शुद्ध वाक्य
1. तुम वापस क्यों लौट आए?	तुम क्यों लौट आए?
2. तुम्हें केवल एक ही किताब मिलेगी।	तुम्हें एक ही किताब मिलेगी।
3. बात को बार-बार दोहराने की जरूरत नहीं।	बात को दोहराने की जरूरत नहीं।

(छ) शब्द-क्रम संबंधी अशुद्धियाँ—

अशुद्ध वाक्य	शुद्ध वाक्य
1. हमें पक्की ईश्वर में आस्था रखनी चाहिए।	हमें ईश्वर में पक्की आस्था रखनी चाहिए।
2. सिर दर्द की दवा एस्प्रीन है।	एस्प्रीन सिर दर्द की दवा है।

(ज) मुहावरे/लोकोक्तियों संबंधी अशुद्धियाँ—

अशुद्ध वाक्य	शुद्ध वाक्य
1. पिता जी के सामने महेन्द्र बिल्ली बन जाता है।	पिता जी के सामने महेन्द्र भीगी बिल्ली बन जाता है।
2. रोहित अक्ल का शत्रु है।	रोहित अक्ल का दुश्मन है।
3. हमें किसी का मुँह नहीं देखना चाहिए।	हमें किसी का मुँह नहीं ताकना चाहिएं

(झ) वाच्य संबंधी अशुद्धियाँ

कर्तृवाच्य और कर्मवाच्य की अशुद्धियाँ

अशुद्ध वाक्य	शुद्ध वाक्य
1. अध्यापक ने विद्यार्थियों से निबन्ध लिखाया।	अध्यापक ने विद्यार्थियों से निबन्ध लिखवाया।
2. उग्रवादियों ने थाना लूटा।	उग्रवादियों द्वारा थाना लूटा गया।
3. अध्यापक ने कहा गया कि कल कोई पुस्तकें न लाओ।	अध्यापक द्वारा कहा गया कि कल कोई पुस्तकें न लाए।

(ञ) अविकारी रूपों संबंधी अशुद्धियाँ

अशुद्ध वाक्य	शुद्ध वाक्य
1. मैंने सुख का साँस लिया।	1. मैंने सुख की साँस ली।
2. यह पुस्तक हाथ-हाथ बिक गई।	2. यह पुस्तक हाथों-हाथ बिक गई।
3. तुम सबों ने ऐसा-ऐसा क्यों किया?	3. तुम सबने ऐसा क्यों किया?
4. कृपया कर इधर आइए।	4. कृपया इधर आइए।

(ट) अन्य अशुद्धियाँ—

अशुद्ध वाक्य	शुद्ध वाक्य
1. उसने दंड भोगने योग्य काम किया है।	उसने दंड पाने योग्य काम किया है।
2. सभी ने पायल की ओर आकर्षित हुए।	सभी पायल की ओर आकर्षित हुए।
3. यहाँ नहीं खेलो।	यहाँ मत खेलो।
4. उसके तीन भइए हैं।	उसके तीन भाई हैं।
5. आप उसको यहाँ बुला लो।	आप उसे यहाँ बुला लीजिए।
6. सभी का नाम लिखो।	सभी के नाम लिखिए।
7. गुरुजी हमारे पूज्यनीय हैं।	गुरुजी हमारे पूज्य हैं/पूजनीय है।
8. वसंत ऋतु आ गया।	वसंत ऋतु आ गई।

9.	वह बेवकूफ आदमी है।	वह बेवकूफ है।
10.	आज सप्ताहिक अवकाश है।	आज साप्ताहिक अवकाश है।
11.	छात्रों ने मुख्य अतिथि को एक फूलों की माला पहनाई।	छात्रों ने मुख्य अतिथि को फूलों की एक माला पहनाई।

	अशुद्ध वाक्य	**शुद्ध वाक्य**
1.	गाय को मिलाकर सानी खिलाओ।	1. गाय को सानी मिलाकर खिलाओ।
2.	हमारे माताजी का आज वृत है।	2. हमारी माताजी का आज व्रत है।
3.	कृपया स्वीकृति देने की कृपा करें।	3. कृपया स्वीकृति दें।/स्वीकृति देने की कृपा करें।
4.	लड़का लोग घर चला गया।	4. लड़के घर चले गये।
5.	सोने का हार ले आओ।	5. सोने का एक हार ले आओ।
6.	कृपया आज का अवकाश देने की कृपा करें।	6. कृपया आज का अवकाश स्वीकृत करें।
7.	मुझे हजार रुपए चाहिए।	7. मुझे एक हजार रुपए चाहिए।
8.	क्या यह देख लिया है।	8. क्या यह देख लिया है ?
9.	सुरेश को, योगेश को और मोहन को मैंने कल साथ-साथ देखा।	9. सुरेश, योगेश और मोहन को मैंने कल साथ-साथ देखा।
10.	क्या आप देख लिए हैं।	10. क्या आपने देख लिया है ?
11.	तुम तुम्हारी पुस्तक पढ़ो।	11. तुम अपनी पुस्तक पढ़ो।
12.	खरगोश को काटकर घास खिलाओ।	12. खरगोश को घास काटकर खिलाओ।
13.	हमारी माता जी आज आने वाले हैं।	13. हमारी माता जी आज आने वाली हैं।
14.	यहाँ पर कल एक लड़का और लड़की बैठी थीं।	14. यहाँ कल एक लड़का और लड़की बैठे थे।
15.	उसने ऐसा करा कि सब सत्यानाश हो गया।	15. उसने ऐसा किया जिससे सब सत्यानाश हो गया।
16.	कृपया करके आज मेरी बात सुनो।	16. कृपया करके आप आज मेरी बात सुनिए।
17.	पुलिस ने डाकुओं का पीछा किया।	17. डाकुओं का पुलिस ने पीछा किया।
18.	माँ पहले आप मुझे मिठाई खिलाओ।	18. माँ पहले आप मुझे मिठाई खिलाइए।
19.	लड़का लोग सब घर चला गया।	19. सब लड़के घर चले गये।
20.	कृपया करके आज अवकाश देने की कृपा करें।	20. आज आप अवकाश देने की कृपा करें।
21.	हमारा लक्ष्य देश की चहुँमुखी प्रगति होनी चाहिए।	21. हमारा लक्ष्य है कि देश की चहुँमुखी प्रगति होनी चाहिए।
22.	केवल यहाँ दो पुस्तकें रखी हैं।	22. यहाँ केवल दो पुस्तकें रखी हैं।
23.	तुमने आज घर में क्या करा ?	23. तुमने आज घर में क्या किया ?
24.	तुम मेरे पड़ोसी हो मैं आपको भली-भाँति जानता हूँ।	24. मैं आपको भली-भाँति जानता हूँ क्योंकि आप मेरे पड़ोसी हैं।
25.	यह पद केवल मात्र महिलाओं के लिए आरक्षित है।	25. केवल महिलाओं के लिए यह पद आरक्षित है।
26.	कश्मीर में अनेक दर्शनीय स्थल देखने योग्य हैं।	26. कश्मीर में अनेक दर्शनीय स्थल हैं।
27.	क्या आप पढ़ लिया है।	27. क्या आपने पढ़ लिया है ?
28.	आशा है तुम सकुशलपूर्वक होंगे।	28. आशा है तुम सकुशल होंगे।
29.	कौन मकान सजाए गए थे ?	29. मकान किसने सजाया था ?
30.	मैं खाना खा लिया हूँ।	30. मैंने खाना खा लिया है।
31.	गाँधीजी का देश आभारी है।	31. देश गाँधीजी का आभारी है।
32.	कृपया आप मेरे घर पधारने की कृपा कीजिए।	32. आप मेरे घर पधारने की कृपा कीजिए।
33.	घास पर चलना निषेध है।	33. घास पर चलना मना है।
34.	तुम सपरिवार सहित आना।	34. तुम परिवार सहित आना।
35.	तुम जैसा करोगे सो भरोगे।	35. तुम जैसा करोगे वैसा भरोगे।
36.	मैंने आज जाना है।	36. मुझे आज जाना है।

OSWAL BOOKS LEARNING MADE SIMPLE

37. मोर के पास सुंदर पंख होते हैं।	37. मोर के पंख सुंदर होते हैं।
38. हमारे विद्यालयों में लड़के और लड़कियाँ सभी पढ़ती हैं।	38. हमारे विद्यालय में लड़के और लड़कियाँ सभी पढ़ते हैं।
39. मेरे को किसी की चिंता नहीं।	39. मुझे किसी की चिंता नहीं।
40. उत्तम चरित्र–निर्माण लक्ष्य हमारा होना चाहिए।	40. हमारा लक्ष्य उत्तम चरित्र–निर्माण होना चाहिए।
41. यह पाठ हमारी पाठ्य–पुस्तक से लिया है।	41. यह पाठ हमारी पाठ्य–पुस्तक से लिया गया है।
42. तुम्हारा सब काम ऐसा ही होता है।	42. तुम्हारे सब काम ऐसे ही होते हैं।
43. अभी तो बारह बजा है।	43. अभी तो बारह बजे हैं।
44. गीता में श्री कृष्ण ने अर्जुन को उपदेश दिया।	44. श्री कृष्ण ने, अर्जुन को गीता का उपदेश दिया।
45. यह कार्य तत्काल अभी पूर्ण करना है।	45. यह कार्य तत्काल पूर्ण करना है।
46. क्या इसका अनुकरण हो सकता है?	46. क्या इसका अनुसरण हो सकता है?
47. यह एक विद्वान नारी है।	47. यह एक विदुषी है।
48. मेरा काला घोड़ा हरा घास खाता है।	48. मेरा काला घोड़ा हरी घास खाता है।
49. यह बात राम को पूछो।	49. यह बात राम से पूछिए।
50. कमीज तो सिल गया है, लेकिन बटन नहीं टँका है।	50. कमीज तो सिल गयी है, लेकिन बटन नहीं टँके हैं।
51. उसने मद्रास जाना है।	51. उसे मद्रास जाना है।
52. इन सबों ने काम नहीं करा है।	52. इन सबने काम नहीं किया है।
53. क्या यह सारा काम तुमने करा है?	53. क्या यह सारा काम तुमने किया है?
54. बुरा व्यक्ति भी अच्छे व्यवहार की आशा करता है।	54. बुरा व्यक्ति भी अच्छे व्यवहार की आशा रखता है।
55. रोगी की दिशा ठीक नहीं है।	55. रोगी की दशा ठीक नहीं है।
56. यहाँ देवतों की पूजा होती है।	56. यहाँ देवताओं की पूजा होती है।
57. रोगी को पथ देना चाहिए।	57. रोगी को पथ्य देना चाहिए।
58. पिछला साल तुम कहाँ गया था।	58. पिछले साल तुम कहाँ गए थे?
59. शहीदों का यह देश सदा आभारी रहेगा।	59. यह देश शहीदों का सदा आभारी रहेगा।
60. आज हमारा तबियत ठीक नहीं है।	60. आज हमारी तबियत ठीक नहीं है।
61. पिताजी अभी मद्रास से नहीं आई हैं।	61. पिताजी अभी मद्रास से नहीं आए हैं।
62. मुझे घमण्डी लोग अच्छा नहीं लगता।	62. मुझे घमण्डी लोग अच्छे नहीं लगते।
63. आप क्या करोगे?	63. आप क्या करेंगे?
64. उसके भाभीजी इन दिनों बीमार हैं।	64. उसकी भाभीजी इन दिनों बीमार हैं।
65. ह्यस्य और रुदन जीवन पर अंग होता है।	65. हास्य और रुदन जीवन के अंग होते हैं।
66. हमें लोगों में दु:ख बाँटने चाहिए।	66. हमें लोगों के दु:ख बाँटने चाहिए।
67. आजकल ब्याज की दर सौ रुपये पर आठ प्रतिशत है।	67. आजकल ब्याज की दर आठ प्रतिशत है।
68. राणा प्रताप अकबर की आँख का तारा थे।	68. राणा प्रताप अकबर की आँख का काँटा थे।
69. मात्रभूमि की रक्षा हमारा पुनीत कर्तव्य है।	69. मातृभूमि की रक्षा करना हमारा पुनीत कर्तव्य है।
70. अभी तो बारह बजा है।	70. अभी तो बारह बजे हैं।
71. हम यह काम नहीं कर सकता।	71. हम यह काम नहीं कर सकते।
72. यह सुनकर मैं अतिविस्मय हुआ।	72. यह सुनकर मुझे अतिविस्मय हुआ।
73. उसकी ख्याति सारे देश भर में फैली है।	73. उसकी ख्याति सारे देश में फैली है।
74. निर्दयी औरंगजेब की क्रूरता आज भी कँपा देती है।	74. औरंगजेब की क्रूरता आज भी कँपा देती है।
75. दुष्ट हत्यारे को मृत्युदण्ड की सजा मिलेगी।	75. दुष्ट हत्यारे को मृत्युदण्ड मिलेगा।

❑❑

खण्ड 'ब' उपन्यास

अध्याय-4

सारा आकाश

—राजेन्द्र यादव

उपन्यासकार का संक्षिप्त परिचय

राजेन्द्र यादव आधुनिक कथा साहित्य व नई कहानी आंदोलन के आधार स्तम्भ लेखकों में अग्रगण्य हैं। उनका कथा-साहित्य यथार्थवादी लेखन के अत्यन्त निकट है तथा उन्होंने अपने लेखन द्वारा समानान्तर आंदोलन को बल दिया है। राजेन्द्र यादव का जन्म आगरा (उ. प्र.) में 28 अगस्त, 1929 को हुआ। उन्होंने एम. ए. हिन्दी प्रथम श्रेणी में आगरा विश्वविद्यालय से 1951 में पास किया। राजेन्द्र यादव ने आधुनिक भाव-बोध को व्यापक सामाजिकता से सन्दर्भित करने का प्रयास किया। इनका देहान्त दिल्ली में 28 अक्टूबर, 2013 को हुआ।

राजेन्द्र यादव के लेखन की सूची अत्यन्त लम्बी है। उनकी कुछ महत्वपूर्ण रचनाएँ इस प्रकार हैं—

उपन्यास—'सारा आकाश' (1960), 'उखड़े हुए लोग', 'कुलटा', 'शह और मात', 'अनदेखे अनजाने पुल', 'मंत्र-विद्ध', 'एक इंच मुस्कान' (मन्नू भंडारी के साथ सह-लेखन)।

कहानी संग्रह—'देवताओं की मूर्तियाँ', 'जहाँ लक्ष्मी कैद है', 'खेल-खिलौने' आदि।

कविता संग्रह—'आवाज तेरी है' (1967)।

समीक्षा—'प्रेमचंद की विरासत', 'स्वरूप और संवेदना', 'औरों के बहाने', 'अठारह उपन्यास', उपन्यास : स्वरूप और संवेदना।

- 1999 में राजेन्द्र यादव को प्रसार भारती के बोर्ड का सदस्य नामित किया गया।
- 2013 में उत्तर प्रदेश सरकार द्वारा 'यश भारती सम्मान' से सम्मानित किया गया।

राजेन्द्र यादव का लेखन सदैव ही समकालीन सन्दर्भों से जुड़ा हुआ रहा है। इनके उपन्यासों में अस्तित्ववादी चेतना और प्रगतिशील तत्वों की अधिकता मिलती है। वे व्यक्ति की पहचान करने में सिद्धहस्त रहे हैं। इसीलिए उनके पात्रों में आन्तरिक स्थितियों का गहन अनुभव पाया जाता है। वे अपने पात्रों को आस-पास की स्थितियों के माध्यम से चित्रित करते हैं क्योंकि उन्हें अनुभूति की तरलता का अनुभव रहता है।

कथा शिल्प के आधार पर उनका साहित्य (कथा साहित्य) अत्यन्त कलात्मक है। वे विभिन्न स्थितियों के चित्रण के लिए बिंबों, प्रतीकों, संकेतों और मिथकों का सार्थक उपयोग करते हैं। उनकी भाषा-सरल, सहज व प्रचलित भाषा है, जिसमें उन्होंने देशज तत्सम, अंग्रेजी व उर्दू-फारसी की शब्दावली का प्रयोग किया है।

उपन्यास का संक्षिप्त सार

राजेन्द्र यादव ने प्रस्तुत उपन्यास 'सारा आकाश' को **पूर्वार्द्ध : साँझ** व **उत्तरार्द्ध : सुबह** नामक दो खण्डों में विभक्त किया है। इसके अन्तर्गत दोनों परिच्छेदों का कथा नियोजन इस प्रकार है।

पूर्वार्द्ध : साँझ

अध्याय-1

बिना किसी ताल और लय के ढमाढम पिटती ढोलक और औरतों के गीतों के स्वर अचानक रुक गए। 'क्या हुआ?' पूछते हुए सारी औरतें, बच्चे गली वाले जंगले और छज्जों पर से झाँककर देखने लगे। क्योंकि गली के पार, ठीक हमारे घर के सामने वाले साँवल की बहू मिट्टी का तेल छिड़ककर कोठरी में जलकर मर गयी थी। जाने किस अनिष्ट की आशंका से सबके दिल धड़क उठे। ऐसी चीख- पुकार, भाग-दौड़ मच गई थी जैसे कहीं भूचाल आ गया हो। समर बार-बार खुद को विश्वास दिलाता था, लेकिन उसे विश्वास ही नहीं होता था कि आज उसकी सुहागरात है। प्रभा और समर के अहंकार के कारण थोड़ी देर तक कोई भी पात्र एक-दूसरे से नहीं बोलता और उन दोनों की यह संवादहीनता की गाँठ लम्बे समय तक लगी रहती है।

समर एक कर्मठ कार्यकर्ता है। वह दो हफ्तों से शाखा नहीं गया है। वह अपने साथियों से आँखें चुराता फिर रहा है वह मन्दिर की ओर जा रहा है। वहाँ बैठकर शांति का अनुभव करता है और सोचता है—'देश को साहसी और कर्मठ युवकों की जरूरत है' का नारा देने वाला यह युवक भी अब चौपाया हो गया है। वह सोचता है कि कैसा बोझिल प्रारम्भ है जिन्दगी का! वह अभी इण्टर में पढ़ रहा है। उसके मन के खिलाफ उसकी शादी कर दी गयी थी। वह मन में सोचता है कि कहीं भाग जाऊँ। न जाने किसको मेरे गले में बाँध दिया है।

शादी से पहले तो समर बस इतना ही कह पाता था कि "मेरे पाँव में चक्की मत बाँधों।" उसमें भागने का साहस नहीं था, अब इसी बात का उसे पश्चाताप हो रहा था।

समर विवाह के अवसर पर दहेज के विषय व अन्य विषयों पर होने वाली टीका-टिप्पणियों को याद करता है। वह अपनी महत्त्वाकांक्षाओं को डायरी में लिखता है। वह कुछ बनना चाहता है। उसकी स्थिति द्वंद्वग्रस्त हो उठती है, क्योंकि वह सोचता है कि यही उसके कुछ बनने का समय था।

समर सोचता है कि वह मोह जाल में फँस चुका है। वह यह भी सोचता है कि प्रभा से वह अपनी स्थिति साफ़ कर देगा कि वह पहले से ही विवाह के विरुद्ध था। इसीलिए उसकी दांपत्य के विषय में उदासीनता थी। समर, प्रभा की दसवीं तक की शिक्षा और सौन्दर्य पर की गई टिप्पणियों को याद करता है।

अध्याय-2

समर अन्तर्द्वन्द्व में है। सुहागरात आई और चली गई। हल्के से धक्का देकर भाभी ने पीछे से किवाड़ बन्द कर दिए तो समर कमरे में आ गया। उस समय प्रभा जंगले में सिर रखे खड़ी थी मानो खड़ी-खड़ी सो गई हो। समर थोड़ी देर खड़े रहकर पलंग पर बैठ गया। वह मन ही मन सोचता है कि नारी अंधकार है, मोह है, माया है, समर को यह आश्चर्य होता है कि प्रभा जंगला छोड़कर उसकी ओर नहीं बढ़ी। वह कई प्रकार की अनुकूल कल्पनाएँ करने लगता है। उसकी शिक्षा को कोसता है, क्योंकि समर के घर वाले बिना पढ़े-लिखे हैं और प्रभा मैट्रिक पास है। समर अपने अहं को बनाए रखने की सोचता है।

तभी अचानक समर को ध्यान आया कि प्रभा ने उसके (समर) कमरे में आने के समय उसका अभिवादन, नमस्कार-प्रणाम कुछ भी नहीं किया है। यह सोचते ही उसके गुस्से की आग भड़क उठी, वह अपमान महसूस करता हुआ दरवाजा खोलकर बाहर निकल आया। घर के सभी सदस्य सो चुके थे। समर को वह रात नंगे फर्श पर सोकर काटनी पड़ी। वह सोचने लगा कि पत्नी द्वारा सुहागरात के दिन दिए गए इस उपहार को वह आजीवन नहीं भुला पाएगा। अचानक उसकी आँखें भर आती हैं और वह सोचने लगा कि पता नहीं किस तरह की लड़की को उसके गले मढ़ दिया गया है? कैसे चलेगी जिन्दगी ..... ?

अपने मन की गहराइयों में वह सोचता है कि अभी उठे और बिना किसी से कहे-सुने बाहर निकल पड़े तो कैसा रहेगा? कहीं चला जाएगा, कलकत्ता, बम्बई या हरिद्वार .....।

अध्याय-3

वन में लगी भयंकर आग की तरह घर में यह समाचार तुरन्त फैल जाता है कि समर प्रभा से नहीं बोला। घर के सभी लोग अपनी-अपनी तरह से पूछताछ करते हैं कि क्या कुछ खास बात हुई? समर चुप रहता है। सुबह से कई लोग पूछ चुके थे, शायद प्रभा से भी पूछा हो। लेकिन दोनों (समर और प्रभा) ने ऐसी अनिच्छा दिखाई कि फिर किसी के पूछने की हिम्मत ही नहीं पड़ी। समर को बाबू जी के सामने जाने से हमेशा डर लगा रहता था क्योंकि उनके हाथों बचपन में वह बुरी तरह से मार खा चुका था।

अत: जब मुन्नी से उसे यह खबर मिलती है कि उसको बाबूजी बुला रहे हैं तो उसकी सिट्टी-पिट्टी गुम हो जाती है। बाबूजी समर से पूछते हैं—

"क्या बात है? बहू तुझे पसंद नहीं आई।" समर को चुप देखकर उन्होंने कहा—"साफ़ बता न इसमें झिझक की क्या बात है? सुनते हैं तू उससे बोला भी नहीं?" बाबू जी ने समर को समझाते हुए कहा—"यह तो माना कि तुम्हारी शादी करने की इच्छा नहीं थी, किन्तु अब तो वह इस घर में आ गई है। बेटा, जो हो जाता है उसे निभाना ही पड़ता है।"

प्रभा के पास से लौटकर समर अपने पढ़ने की कोठरी के दरवाजे पर बैठा निरुद्देश्य सा न जाने क्या-क्या सोचता रहा। तभी भाभी ने आकर उसकी वैवाहिक स्थिति पर व्यंग्य किया। समर भाभी से प्रभा के घमण्ड की चर्चा करता है। भाभी ने कहा कि प्रभा को अपनी खूबसूरती और पढ़ाई का गुमान तो है। तभी से भाभी समर को प्रभा के विरुद्ध भड़काना शुरु कर देती है।

अंतत: वह प्रथा आई जिसमें प्रभा को पहली बार खाना बनाना था। भाभी इस पर भी व्यंग्य करती है और कहती है कि समर के भैया बताते हैं कि प्रभा बहुत अच्छा भोजन पकाती है।

रात को फिर अम्मा, बाबूजी, भाभी और मुन्नी उसे प्रत्यक्ष व परोक्ष रूप से समझाने की कोशिश करते हैं कि जिसके साथ फेरे लेते हैं, उसी के साथ किसी न किसी प्रकार निर्वाह करना चाहिए। समर अपनी भाभी से बातें कर रहा होता है तभी प्रभा उसके पास दूध लेकर आ पहुँची। भाभी को नीचे बुलाया जा रहा था वो नीचे चली गई, प्रभा दूध लेकर किवाड़ की ओट में खड़ी रही और समर सोच रहा था कि प्रभा उससे माफ़ी माँगेगी और दूध पीने का आग्रह करेगी। प्रभा ने कुछ नहीं कहा तो समर लापरवाही से कमरे से बाहर निकल आया। उसे पीछे से प्रभा की यह धीमी पुकार सुनाई भी दी "सुनिए!" पर समर ने पीछे मुड़कर भी नहीं देखा और पिछली रात की तरह खुली छत पर सो गया। उस रात उसने दो निर्णय लिए। एक तो यह कि प्रभा उससे अपनी ओर से बोले या न बोले, वह नहीं बोलेगा, दूसरा खूब ध्यान से पढ़ेगा।

दूसरे दिन सुबह प्रभा ने पहली बार खाना बनाया। रस्म और परम्परा के अनुसार वह सबसे पहले समर को ही खाना था। खाना परोसते समय समर को प्रभा के हाथों को देखने का अवसर मिला और उसे लगा कि प्रभा के हाथ गोरे हैं और उन पर मेंहदी रची हुई है। प्रभा ने हाथ में अंगूठी, सोने व काँच की चूड़ियों के साथ रिस्टवाच भी पहनी हुई है। समर को लगा "जैसे हाथ काफी सुन्दर हैं, अंगुलियाँ पतली-पतली और नाजुक हैं।" प्रभा के परोसे भोजन को खाने के लिए जैसे ही समर ने प्रथम ग्रास तोड़कर उसे दाल में डुबोकर खाया तो वह ओ-ओ करता हुआ बाहर भागा और खाया हुआ एक-मात्र कौर उगल दिया। दाल में बहुत अधिक नमक था। इस घटना से घर में कुहराम मच जाता है। संयुक्त परिवार का प्रभाव दिखाई देने लगता है। भाभी की टिप्पणियाँ शुरू हो जाती हैं। अम्मा अपना चिर परिचित दहेज का राग अलापते हुए ताने कसने लगती हैं। दूसरे दिन प्रभा के भाई आए और वह मायके चली गई।

अध्याय-4

अमर ने समर को नीचे बुलाया। संघ के दो स्वयंसेवक समर को शाखा में बुलाने आते हैं। वह सुबह 'शाखा' और शाम को बौद्धिक में जाया करता था पर समर ने कोई बहाना बना दिया। इधर अम्मा प्रभा से खुश नहीं थीं अत: उन्होंने समर के दूसरे विवाह की चर्चा छेड़ दी है। तभी समर ने अम्मा को डाँटते हुए कहा एक शादी ने ही निहाल कर दिया तो दूसरी की बात ही क्या? वह अपने पढ़ने और भविष्य बनाने की बात कहता है। विवाह के दिनों का सारा दिखावा समाप्त हो चुका था और लेन-देन वालों से रोज महाभारत होता था। घर की हालत आर्थिक तौर पर जर्जर थी। बाबूजी को पेंशन के पच्चीस रुपये मिलते थे तथा धीरज को निन्यानबे रुपये मिलते थे। इन रुपयों से घर चलाना बड़ा ही मुश्किल काम था।

मुन्नी समर की छोटी बहन थी। उसका वैवाहिक जीवन अत्यन्त दु:खी था। सोलह-सत्रह की उम्र में उसकी शादी कर दी गई थी। पति और सास मिलकर उस पर अत्याचार करते। पति का चाल चलन भी ठीक नहीं था। उसने किसी और औरत को लाकर घर में रख लिया था।

अब तो अधिक-से-अधिक तटस्थ रहना मुन्नी का स्वभाव बन गया था। वह दिन-प्रतिदिन पीली पड़ती जा रही थी समर को उसके पति पर गुस्सा आता था कि वह उसके पति की खूब पिटाई करे—"राक्षस, अपनी फूल सी बहन इसलिए तुझे दी थी? देख, शरीर पर चोट यों लगती है?"

विवाह के पश्चात् समर का मन बड़ा भारी-भारी और रोगी सा रहने लगता है। इधर भाभी प्रभा के बारे में समर के कान भरती रहती कि औरतों को तो दबाकर ही रखना चाहिए। घर में रुपये-पैसे की तंगी के बखान से समर का पढ़ने का चाव भी मरता जा रहा था। उसका घर में रहने का मन ही नहीं करता था। दिन का समय वह यों ही घूमने या किसी दोस्त के यहाँ जाने में काट देता तो कभी पार्क में पड़ा रहता। उसे समझ में ही नहीं आता था कि उसका क्या खो गया है। कभी-कभी तो उसका मन करता कि एकांत में बैठकर खूब रोए।

कभी वह सोचता कि उसके विवाह ने घरवालों की आशाओं को पूरा नहीं किया तो यह क्या उसका अपराध है। बाबूजी से उसे भय लगता। भाई साहब को उसकी आरे देखने की फुर्सत नहीं मिलती। समर को प्रभा से न बोलने का मन में कहीं न कहीं दु:ख भी है, पर इसका कारण वह प्रभा के व्यवहार में अहंकार को मानता है।

अध्याय-5

एक दिन खाना देते समय मुन्नी ने समर से पूछा कि भैया तुम भाभी से नहीं बोले? दूसरी शादी करोगे क्या? उसके मुँह से निकला कि —"हाँ-हाँ एक शादी कराके जो उसे रुला रही हो, दूसरी किसके नाम को रोएगी।" तभी अचानक भाभी कपड़े धोकर आ जाती है और धुले हुए कपड़ों को सुखाने के लिए मुन्नी से विनती करती हैं।

भाभी समर से प्रभा के घमंड की तान छेड़ देती है तथा खाने में तेज नमक को भी एक मुद्दा बना डालती है। समर भाभी की बेतुकी बातों से ऊब चुका था वह आधा खाना खाकर ही उठ गया। आज अचानक समर के मन की उदासी से बार-बार उठकर ये बातें झाँकने लगती हैं कि प्रभा को मायके गए हुए छ: महीने हो गए हैं। एक पत्र भी प्रभा ने नहीं लिखा। कभी-कभी तो समर सिहर उठता कि इस घमण्डी लड़की के साथ जिंदगी कैसे कटेगी।

समर बोर्ड की फीस माँगने के लिए अम्मा के पास गया पर अम्मा ने बाबूजी से फीस माँगने को कहा। समर उनके पास जाकर चुप रहा। बाद में उसने बुझे स्वर से पैसे की माँग की जैसे वह शराब पीने के लिए पैसा माँग रहा हो। पच्चीस रुपये का नाम सुनते ही बाबूजी तमतमा गए और बोले—"ये मेरी पेंशन के पच्चीस रुपये आए हैं, सो इन्हें तुम ले लो। हमारा क्या है, हमें तो हड्डे पेलने हैं जिन्दगी भर, सो तुम्हारे लिए करेंगे। करम में लिखा के लाए थे कि लड़के धींगरे-ऊँट हो जाएँ तब तक खिलाना, सो खिलायेंगे.....।"

समर की हिम्मत नहीं हुई कि वह पैसे उठाए, पर मजबूरी थी, इसलिए उठा लिए और सोचा कि परेशानियों ने बाबू जी को चिड़चिड़ा बना दिया है। बाबू जी ने समर से प्रभा को मायके से लाने की बात कही, तो उसने कहा कि अमर को भेज दीजिए मैं नहीं जाऊँगा। बाबूजी ने नाराजगी के स्वर में कहा—"तुम्हारा तो दम निकलता है बहू का नाम सुनकर, भेड़िया है न सो खा जाएगी? अच्छी थुकवा औलाद हुई है? सब अपने आपको न जाने किस लाट साहब का बच्चा समझते हैं।"

समर अपने बाबूजी (पिताजी) के विषय में सोचता है कि जब पढ़ा नहीं सकते थे ढंग से, तो पैदा ही क्यों किया था ? जब भी पढ़ने के लिए पैसे माँगों तभी तकरार होती है। बहू को बुलाना है तो बुलाओ, न बुलाना हो तो मत बुलाओ। वह सोचता है कि—"बोलने को तो मजबूर नहीं कर सकते। शादी थोड़े ही है कि जबरदस्ती से काम हो जाएगा।"

अध्याय-6

कॉलेज से लौटते समय अमर ने समर को बताया कि वह भाभी को मायके से ले आया है। उनके घरवालों ने भाभी को बड़ी मुश्किल से भेजा है पर वहाँ पर समर की सब तारीफ़ करते हैं। यह सुनकर समर को आश्चर्य होता है। वह सोचने लगता है कि इसका मतलब प्रभा ने इसके बारे में कुछ नहीं कहा है, समर को अपने अनुचित व्यवहार पर क्षोभ हुआ। अमर ने बताया कि भाभी कुछ कमज़ोर हो गई हैं। समर प्रभा को डॉक्टर को दिखाने के विषय में सोचता है। घर पहुँचते ही मुन्नी ने कहा कि भैया, भाभी आ गई है। अपनी कोठरी में जाता है तो समर वहाँ प्रभा का सामान देखता हैं। वहाँ पड़ी पत्रिका 'माया' उठाता है। उस पर प्रभा का नाम लिखा होता है। वह अपना नाम भी उसके साथ लिखने की सोचता है। फिर सोचता है कि किसी ने देख लिया तो क्या होगा?

दिन ढल चुका था। वह कोठरी से बाहर आ गया। सड़क पर चलते हुए फेरीवालों को दुकान लगाते हुए देखा। वह सड़क पर घंटों घूमता रहा। अब सारी सहानुभूति प्रभा के साथ थी। उसे प्रभा की अच्छाई नजर आने लगी कि उसने अपने मायके में भी कुछ नहीं कहा। काफी देर बाद जब समर घर आया तो भाभी ने परिहास से कहा कि प्रभा आ गई है, तुम्हें इस बात का भी पता है या नहीं। भाभी ने खाना खाने के लिए कहा क्योंकि प्रभा भूखी बैठी थी, उसने जल्दी खाना देने को कहा क्योंकि उसे पढ़ना है, बोर्ड के इम्तिहान हैं। उसके पास पढ़ने के लिए एक ही लालटेन थी जबकि उसके दोनों छोटे भाई अमर और कुँवर एक ही लालटेन से पढ़ते थे। समर पढ़ने के लिए बैठा किन्तु पढ़ने में मन नहीं लगा। तभी उसे प्रभा के पैरों की आवाज सुनाई दी, ऐसा लगा प्रभा भीतर आने से झिझक रही थी। थोड़ी देर बाद उसने सन्दूक खोला, कपड़े निकाले और बाहर चली गई। उसने प्रभा के क्रम-क्रम से उठते हुए पगों को बाहर जाते हुए देखा। तभी छत के दूसरे सिरे से भाभी का स्वर सुनाई दिया वह कह रही थी—चारपाई नहीं है तो मैं डाले आती हूँ। देखो प्रभा, मान जाओ, ऐसा नहीं करते तुम नई बहू हो। शुरू से ही ऐसा करोगी तो फिर आगे कैसे चलेगा ? यह सब तो होता रहता है। समर को प्रभा के अहंकार पर गुस्सा आ रहा था। सोचता है कि अब प्रभा से उसे कोई सम्बन्ध नहीं रखना।

भाभी समझा कर प्रभा को समर के कमरे में भेजती हैं। वह वहाँ फर्श पर बिस्तर लगाकर सो जाती है। समर का दंभ और भी प्रबल हो उठता है। उसे स्मरण आता है कि पहले दिन भी ऐसा ही व्यवहार किया था।

अध्याय-7

समर अपनी भाभी से ऊँचे स्वर में प्रभा को सुनाते हुए अपनी पढ़ाई और भविष्य के विषय में चर्चा करता है। वह भाभी से कहता है कि उसे शादी के बंधन में बलपूर्वक बाँधा गया है। खाना खाते समय समर भाभी से कहता है—"भाभी तुम मुझे पास होने देना चाहती हो या नहीं।" समर का कहना था कि एक अलग कोठरी उसने अपनी पढ़ाई के लिए साफ़ की उसमें भी कोई न कोई आ जाता है तो वहाँ कोई कैसे पढ़ेगा?

सुबह देखा कि प्रभा ने घर का सारा काम सँभाल लिया है। प्रसव से पूर्व घर का जो काम भाभी संभालती थीं अब प्रभा सँभालने लगी थी। वह शाम तक काम करती जाती थी, अम्मा के पैर दबाती और साढ़े ग्यारह बजे के बाद सोने जाती थी, लेकिन उसके व्यवहार में कहीं अनिच्छा और थकान नहीं दिखाई देती थी, इसीलिए समर को और अधिक खीझ-चढ़ती थी कि उसे कोई प्रकट क्यों नहीं होता?

प्रभा के परदा न करने पर घर में अक्सर इस बात को लेकर टीका-टिप्पणी हुआ करती थी। पहले तो किसी ने ध्यान नहीं दिया पर, बाद में बाबू जी को पता लगा तो बोले कि 'फिर बेटी और बहू में फर्क क्या रह गया? बेटी भी मुँह खोले बाल बिखेरे घूमती है और बहू को भी चिंता नहीं कि पल्ला किधर जा रहा है।"

समर भी सैद्धान्तिक रूप से पर्दे के खिलाफ था, किन्तु जब उसने व्यावहारिक रूप से देखा तो उसने भी मुन्नी से कहा—"मुन्नी तेरी यह भाभी बड़ी बद्तमीज है। किसी ने आदर और शिष्टाचार नहीं सिखाया?" अम्मा और भाभी ने भी कहा पर प्रभा पर इसकी कोई भी प्रतिक्रिया नहीं होती थी, जैसे वह एकदम पत्थर की हो।

पहले तो घर वाले प्रभा द्वारा घर का पूरा काम संभाल लेने से चकित थे। लेकिन अब सभी ने उसके काम में दोष निकालने शुरू कर दिए थे। मुन्नी भी कभी-कभी अपनेपन से कह देती थी कि—"भाभी किफायत बरतो।" बाबू जी भी कहते थे कि—"बहू जरा हाथ साध कर काम किया करो।" इन सबमें भी समर के काम निर्बाध रूप से चलते रहे। उसके बाहर जाने पर उसकी कोठरी साफ़ कर दी जाती। सारी बिखरी चीजें करीने से लगी होतीं। यह सब देखकर समर को कष्ट होता था, किन्तु इसे वह पढ़ाई की थकान समझ लेता था, पर कभी-कभी तो वह स्वयं पर ही झुंझला उठता था कि यह प्रभा है क्या?

भाभी की बच्ची के नामकरण संस्कार वाले दिन जब समर शाम को घर लौटा तो उसने देखा कि घर में कुहराम मचा हुआ था। प्रभा ने पूजा में रखे मिट्टी के ढेले से बने गणेश जी को साधारण मिट्टी का डेला समझकर बर्तन माँज दिए थे। भाभी और अम्मा दोनों ही रोते चिल्लाते हुए कह रही थीं कि अब पूजा के अपमान पर कुछ न कुछ अनिष्ट अवश्य होगा। प्रभा चुपचाप अपराधी बनी खड़ी थी। उसके माँ-बाप तक को खरी-खोटी सुनाई गई। कोठरी में चारपाई पर पड़ी भाभी फूट-फूट कर रो रही थी तभी गालियाँ देता हुआ समर प्रभा के गाल पर एक चाँटा मार देता है। सभी स्तब्ध रह जाते हैं। समर को पश्चाताप होने लगता है वह सोचता है कि वह सात-आठ महीने में पहली बार प्रभा से बोला तो गाली से और पहली बार-बात की, वह भी तमाचे से। उसका मन ग्लानि से भर उठता है और वह रो पड़ता है।

अध्याय-8

मुन्नी ने समर से उसकी परीक्षाओं के विषय में पूछा तो समर को कोई सीधा उत्तर याद नहीं आया। समर अभी भी सोच रहा था कि प्रभा पर हाथ उठा ही कैसे? वह अभी तक उस चाँटे के पश्चाताप में जी रहा था और आत्म-ग्लानि भोग रहा था। फिर सोचता है कि प्रभा को भी ऐसा नहीं करना चाहिए था। उसे मिट्टी के ढेले और गणेश जी में अन्तर पता होना चाहिए था, पर औरत पर हाथ उठाना ठीक नहीं था।

उस घटना के बाद दूसरे दिन उसकी बाहर निकलने की हिम्मत नहीं हुई। उस दिन के बाद से समर ने सब कुछ भूलकर परीक्षा की तैयारी करने का संकल्प लिया। इसके बाद उसके भीतर अजीब परिवर्तन आने लगे, परन्तु प्रभा अब भी संदेह के घेरे में थी। जब उसके पत्र आते तो उन्हें खोलकर पढ़ा जाता और फिर बाद में उसे दिया जाता क्योंकि उन्हें यह डर था कि प्रभा कहीं कुछ घर की शिकायत न लिखती हो। एक दिन अम्मा ने प्रभा से कहा कि वह अपने पीहर (मायके) पत्र डाल दिया करे। प्रभा ने न जाने कितने दिन बाद अम्मा का नरम स्वर सुना था।

समर की चेतना धीरे-धीरे कुंठित होती जा रही थी। कभी-कभी तो लगता कि वह सिर्फ संसार और अपने आस-पास को ही नहीं, अपने आपको भी भूलता चला जा रहा था। प्रभा रसोई में आटा गूँथती है, दाल उबलने वाली होती है तभी मुन्नी ने देखा कि दूध फैल गया है। वह भाभी

से शिकायत करती है। उधर अमर अम्मा से शिकायत में कहता है कि दस बज गए पर अभी तक खाना नहीं बना। कब पढ़ने जाऊँगा ? तभी अम्मा की रामायण शुरू हो जाती है—"आग लगे ऐसी पढ़ाई में, दसवीं पढ़ी है ये, दसवाँ ..... क्या घूरे जैसी हालत कर रखी है रसोई की?" अब तो ये बातें साधारण सी लगने लगी थीं, बस एक ही बात थी जो दिल को कष्ट पहुँचाती थी—वह थी कि समर ने प्रभा का चेहरा सदैव अपरिवर्तनीय और ऐसा भावहीन देखा कि मानो किसी ने पत्थर का बना दिया हो।

घर में रोज ही कलह होती। एक दिन अम्मा ने प्रभा को डाँटा कि कभी-कभी सिर तो धो लिया करे, प्रभा ने कहा कि घर में इतना काम है कि समय ही नहीं मिलता। एक दिन प्रभा ने ऊपर छत पर बाल धोए तो बाबू जी बहुत नाराज हुए—कि अगर इसे परदा नहीं करना तो न सही, किन्तु इतनी क्या बेशर्मी कि छत पर जाकर सिर धोओ, दस आदमी देखते हैं। मुन्नी ने प्रभा का बचाव किया। समर के अन्दर कोई बोलता, महसूस करता है या नहीं यह भी वह नहीं समझ पाया। उसकी परीक्षा में पाँच-सात दिन रह गये थे।

अध्याय-9

समर अन्तिम पेपर करके हॉल से बाहर आया तो वह खुश था,क्योंकि पेपर अच्छे हो गये थे। दिवाकर अपनी पत्नी किरण के साथ पिक्चर जाने की बात कहता है वह समर को भी ठीक समय पर पहुँच जाने का निर्देश देता है।

समर जब घर आया तो उसे पता चला कि मुन्नी के पति उसे लेने आए हैं। बाबू जी बड़ी मुश्किल से माने, किन्तु मुन्नी तो रोती ही रही और बोली कि हम नहीं जाएँगे, बाबू जी इससे अच्छा तो है कि आप हमें जहर लाकर दे दें। मुन्नी के छोटे भाई कुँवर ने मुन्नी को न भेजने की राय दी। अम्मा की भी यही राय थी। बाबू जी ने विश्वास दिलाते हुए कहा, "भाई वह कसम खा रहा है, विश्वास दिलाता है। बातों से भी लगता है कि अब समझ आ गई है। धीरज की माँ, हो गई गलती एक बार। अब क्या कोई जिंदगी भर यही करता रहेगा। इस उम्र में आदमी को होश नहीं रहता। हमने उससे सारी बातें साफ़-साफ़ कर ली हैं?"

मुन्नी ने बाबू जी से रोते हुए कहा—"बाबू जी मैं किसी का चौका-बरतन कर लूँगी, पीस-कूट लूँगी, मुझे वहाँ मत भेजो उनके साथ।" बाबू जी उसे समझा रहे थे—

"हम लोग क्या कोई गैर हैं? तू आधी रात को यहाँ आ जइयो, कोई ऐसी वैसी बात देखे तो। यह तेरा घर पहले हैं, हमारा बाद में।..... ....अब कोई बात नहीं होगी।'' मुन्नी निरन्तर रोए जा रही थी, पर बाबू जी के सामने किसी की नहीं चली,

अगले दिन सुबह जब मुन्नी को विदा किया तो वह प्रभा से लिपटकर खूब रोई जैसे दोनों जन्म जन्मान्तरों को विदा ले रही हैं। फिर समर से लिपटकर भी मुन्नी रोई और बोली कि—"भइया तुम भाभी से बोलना उन्होंने कुछ नहीं किया है।" मुन्नी की पुन: विदाई हो जाती है। परन्तु जाते समय वह एक मिनट के लिए भी चुप नहीं हो रही थी। जब तक मुन्नी की गाड़ी दिखी समर उसे देखता रहा। इसके बाद वह अपने कमरे का द्व ार बंद करके बैठ जाता है। उसकी आँखों से आँसू लगातार बह रहे थे। वह अपने मन की गूँज को समझ नहीं पा रहा था।

मुन्नी के जाने के बाद पूरे घर में उदासी छा जाती है। कोई मुँह लटकाए इधर बैठा था कोई उधर सिसक रहा था। घर खाने को दौड़ रहा था।

अध्याय-10

समर दिवाकर के यहाँ से खाना खाकर निकला तो ग्यारह बज चुके थे। यह तो निश्चित था कि घर पर डाँट पड़ेगी क्योंकि घर पर बताकर नहीं आया था। रात के दस बजे सिनेमा समाप्त हुआ। दिवाकर की पत्नी किरण भी साथ गई थी। दिवाकर ने समर से पूछा कि उसके दिन कैसे कट रहे हैं उसे याद आता है कि सुबह भाई साहब ने भी उससे पूछा था—"क्यों अब क्या इरादा है? इम्तिहानों से तो छुट्टी मिल गई न?" परन्तु भाई साहब का प्रश्न समर की नौकरी से सम्बन्धित था। बातों-बातों में दिवाकर अगले वर्ष की पढ़ाई के विषय में पूछता है। तभी किरण अपनी सास की बुराई करती है तो समर को बुरा लगता है कि वह अपनी माँ की बुराई कैसे सुन लेता है।

दिवाकर ने समर से प्रभा को उनके घर लाने को कहा तो वह बहाना कर देता है कि वह अपने घर गई हुई है। अगली बार आएगी तो मिलवाऊँगा।

समर ने घर पहुँचकर देखा कि पिताजी (बाबूजी) दुर्वासा का रूप धारण किये हैं। प्रभा सिर झुकाए अपराधिन की-सी मुद्रा में खड़ी है। प्रभा ने छत पर बैठकर दाल बीन ली थी, बाबूजी को ये बातें बिल्कुल पसन्द नहीं है। उन्होंने बताया कि मुहल्ले में ही पाण्डेजी की लड़की भाग गई। धीरज (भाई साहब) ने बताया कि मास्टर के साथ भागी होगी, अम्मा ने प्रभा से कहने न कहने लायक बातें भी कह दीं।

समर सिनेमा देखकर घर पहुँचा तो अमर ने किवाड़ खोले और कहा कि सब लोग परेशान हो रहे थे कि आप कहाँ चले गए थे कोठरी में देखा तो खाना नहीं रखा था। मार्च महीने का अन्त आ चुका था। ठंड कम हो गई थी। रात का समय था साढ़े ग्यारह बजे थे समर ने देखा कि आज प्रभा ने पानी नहीं रखा था वह पानी पीने उठता है तो देखा कि बाहर ओस में सफेद-सफेद सा कोई बैठा है, वह प्रभा थी। वह सिसक-सिसक कर रो रही थी। समर ने पूछा—"आधी रात को यहाँ बैठकर क्या कर रही हो? .....सुबह रो लीजिए न, ओस में तबियत खराब हो जाएगी। अब रात काफी हो गई है।" प्रभा ने रुआँसे स्वर में तड़पकर कहा—"एक साल से कभी आपको चिंता हुई कि मरती है या जीती है? ऐसी क्या खास जरूरत आ पड़ी अब।" नि:शक्त और टूटा हुआ समर वहीं उसके पास धम्म से बैठ जाता है और उससे पूछता है—"प्रभा, तुम मुझसे नाराज हो?" प्रभा ने समर के कंधे पकड़ लिए और कहा कि "मैंने तुम्हारा क्या बिगाड़ा है? क्या कसूर किया है मैंने तुम्हारा? मैं तुम्हारे लायक नहीं हूँ..... तुम शौक से दूसरी शादी कर लो, लेकिन मुझे बताओ तो सही....." यह कहते हुए प्रभा समर के कंधे पर लिपट गई। समर को

खुद भी होश नहीं रहा कि वह कब रोने लगा। उसे अपने द्वारा किए गए सभी प्रकार के अत्याचार एक-एक कर याद आते रहे। न जाने वे दोनों कब तक इस तरह रोते रहे। जरा-सी देर रुक जाते और फिर नए आवेश में भरकर रोने लग जाते थे।

सुबह किसी के जागने से पहले ही वह उठकर बाहर चली गई। जाते हुए उसने कहा—हमें एक पोस्टकार्ड लाकर दे देना। माँ को पत्र लिखना है।

उत्तरार्द्ध : सुबह

अध्याय-1

सुबह उठकर समर को ऐसा लगा मानो जिंदगी में वह पहली बार सूर्योदय देख रहा है। न जाने वह कितने दिनों तक अंधेरी कोठरियों में कैद रहा, रोशनी में वह प्रभा से कैसे बात कर पाएगा? उसकी उलाहना भरी आँखों का सामना वह कैसे कर पाएगा? सुबह उठते ही समर दिवाकर के घर पहुँचा, खूब जोर-जोर से आवाजें देने के बाद दिवाकर उठा और उठते ही उसने समर से कहा—"खुद की बीवी तो है नहीं, बीवी वालों के आराम से क्यों जलता है? क्या बात है आज तो चेहरा बड़ा चमक रहा है? सुबह-सुबह क्या फर्स्ट डिवीजन में पास होने का सपना देखकर आ रहा है? समर कल हमारे चचेरे भाई आ रहे हैं, देख भाई ये अपनी चोटी कटाकर आना कहीं वो मज़ाक बनाने लगे और तू बुरा मान जाए। उन्हें ये ढोंग-वोंग कम ही पसंद हैं।"

समर नौकरी करना चाहता है पर इंटर पास को कौन नौकरी देता है? इस यथार्थ को देखकर समर घबरा गया। दिवाकर के यहाँ से लौटते समय समर ने उसे बताया कि प्रभा आ गई है।

समर जब घर पहुँचा तो दो बज चुके थे। बाबू जी ने कहा नवाब साहब मटरगस्ती करके आ गए। जब समर ने बाबू जी से कहा कि वह नौकरी के सिलसिले में गया था तो वे कुछ नरम हुए। जब समर रसोई में गया तो प्रभा का शरीर एक अजब संतोष की आभा से दीप्त था, जैसे बरसों बाद दर्पण से धूल पोंछ दी गई हो।

प्रभा की साड़ी एकदम फट गई थी, भाभी की लड़की जब से हुई थी, उन्होंने सारे कार्यों को तो तिलांजलि दे दी थी। घर का सारा कार्य भार प्रभा पर आ गया था। इस बीच प्रभा और मेरा बोलना सबको पता लग चुका था।

अम्मा ने समर को बाबू जी को बुलाने भेजा। वे नवल किशोर पंडित जी के यहाँ भारतीय लोगों और संस्कृति के बारे में बात कर रहे थे। समर ने बाबू जी से कहा कि आप को घर पर बुलाया है। समर को अन्दर से बच्ची को लाने की कहकर वे चल दिये। पंडित जी की पुत्र-वधू बैठी-बैठी भाभी की बच्ची को खिला रही थी। पंडिताइन अपने बेटे की शिकायत समर से करती हैं तो उनके बेटे की बहू सास की तरफ ठेंगा दिखाते हुए मुस्कराकर बच्ची को लाकर समर को दे देती है।

अध्याय-2

प्रभा ने बताया कि उस दिन खाने में (दाल में) नमक भाभी ने डाला था, यह प्रभा ने तो नहीं देखा था, किन्तु, मुन्नी ने देखा था। समर प्रभा से पूछता है कि आने वाले दिन ही उसने समर का इतना बड़ा अपमान क्यों किया? प्रभा समर को टालने की कोशिश करती है पर समर जब अधिक अनुरोध करता है तो प्रभा ने कहा—"हफ्तों से जागने की थकान थी, बहुत बदन टूट रहा था। तबियत बहुत उदास थी। जरा-जरा सी देर बाद घर की याद आती। फिर मुन्नी दीदी ने अपना किस्सा सुनाया तो मन और भी बेचैन हो गया। वही तो यहाँ बातें करने वाली थीं। फिर संयोग से उसी दिन खिड़की के सामने वाले घर में वह कमबख्त साँवल की बहू जल मरी और भी दो-एक बातें ऐसी हो गईं कि रोने के सिवा कुछ सूझ ही नहीं रहा था। बोलने का तो कतई मन ही नहीं था। ..... क्या बात करती आपसे।"

कोठरी के अँधेरे में दोनों बातें कर रहे थे। समर ने पूछ ही लिया कि अम्मा और भाभी उससे नाराज क्यों रहती हैं? प्रभा ने कहा कि दहेज न लाने के कारण अम्मा और बाबूजी नाराज हैं। भाभी अम्मा के दिन भर कान भरती हैं। समर को शुरू से लेकर अब तक की सभी बातें याद आती हैं। तभी प्रभा समर को अपनी सखी रमा के बारे में बताती है जो कि उसकी सहपाठिनी थी। वो अपने जीवन के विषय में नई-नई योजनाएँ बनाती रहती थी और वे दोनों सखियाँ समर के विषय में भी बातें करती थीं।

समर प्रभा की बात बीच में काट कर पूछता है कि उससे विवाह करने का उसे अफसोस है। प्रभा ने कहा—"नहीं तो, क्या मैंने तुमसे ऐसा कहा?" समर चुप हो गया।

समर प्रभा से पूछता है कि क्या वह थर्ड ईयर की पढ़ाई ज्वॉइन कर ले। वह कहती है कि जो उसे ठीक लगे वही करे। फिर प्रभा भी किसी विद्यालय में अध्यापिका की नौकरी का संदर्भ उठाती है तो कमरे में परिहास खनक उठता है। समर अपने मित्र दिवाकर और उसकी पत्नी किरण को अपने घर बुलाने की बात रखकर खुद ही काट देता है।

सुबह का उजाला आकाश में उभरता चला आ रहा था। प्रभा अब उठकर जाने को थी। वह बोली—"लेकिन अच्छी नौकरी के बाद फर्ज़ ज्यादा अच्छी तरह अदा नहीं किया जा सकता।" समर उसकी ओर प्रश्नात्मक दृष्टि से देखता है कि इसका अर्थ क्या समझे?

अध्याय-3

समर रोजगार कार्यालय जाता है, पर वहाँ की भीड़ देखकर निराश हो घर लौट आता है। एक दिन समर अपनी भाभी से प्रभा के लिए एक धोती माँगता है तो वह कहती है कि अम्मा से जाकर ले ले। जब वह अम्मा से माँगता है तो प्रभा का नाम सुनते ही वह उल्टे ताने मारना शुरू कर

देती हैं और बाबू जी से कहती हैं कि—"तुम्हारा लड़का बहू की तरफदारी लेकर आया है।" बाबूजी ने क्रोध से भरकर समर से कहा—"कमाने धमाने को कौड़ी नहीं और बहू की तरफदारी को शेर।" तभी प्रभा आकर बीच बचाव करना चाहती है, वह कहती है कि उसके पास साड़ियाँ तो हैं परन्तु उन्हें घर में पहनकर क्या करेगी। समर प्रभा पर अपना गुस्सा निकालता है वह उसे सामने से जाने के लिए कहता है। वह सोचता है कि काश उसे कहीं कोई गड़ा हुआ खजाना मिल जाता तो इन सबकी नाक में रुपया ठूँस देता।

समर अपना मैट्रिक का प्रमाण-पत्र लेकर रोजगार कार्यालय जाता है, वहाँ भारी भीड़ थी ऐसा लग रहा था कि कोई नेता भाषण दे रहा होगा। तभी किसी ने पीठ पर हाथ रखते हुए कहा—"कहिए स्वयं सेवक जी!" समर को उस व्यक्ति का चेहरा आकर्षक लगा। समर के पूछने पर उसने बताया कि यहाँ शायद मजदूरों या क्लर्कों की भर्ती हो रही है। रोजगार कार्यालय के बोर्ड को देखने से पता लगा कि वहाँ दस बढ़ई, पचास मजदूर और तीन क्लर्कों के स्थान रिक्त हैं, जबकि वहाँ लगभग तीन हजार व्यक्ति एकत्र थे। समर निराश हो गया। दिवाकर ठीक कहता था कि, जब तक डिग्री न हो तब तक अच्छी नौकरी नहीं मिलती।

उन दूसरे महाशय ने जो कि वास्तव में शिरीष बाबू थे कहा—हमारे वनमानुषों जैसे चेहरे वाले नेताओं को शरम भी तो नहीं आती वे दिन-रात गला फाड़-फाड़कर चिल्लाते रहते हैं कि देश के नव निर्माण के लिए हमें डॉक्टर, वैज्ञानिक, मशीन चलाने वाले लोग चाहिए, ड्राइवर चाहिए, किन्तु वास्तव में उन्हें अपने बंगलों की क्यारियाँ हरी-भरी रखने के लिए माली चाहिए। समर को शिरीष की बातें बड़ी अच्छी लगीं।

दोपहर बाद जब समर घर पहुँचा तो उसने अमर के हाथ में एक पत्र देखा जो कि प्रभा की सहेली रमा का था, जो कि जोधपुर से आया था। इससे पहले प्रभा के सभी पत्रों को खोलकर पढ़ लिया जाता था। उस दिन समर ने उस पत्र को ज्यों का त्यों प्रभा को सौंप दिया। प्रभा ने उस पत्र को, बक्से में रखने के लिए समर को ही दे दिया, और कहा कि आज खाना क्यों नहीं खाया मैं अभी तक भूखी बैठी हूँ। प्रभा ने समर को ताजा खाना बनाकर दिया। समर जब रमा के पत्र को बक्से (सन्दूक) में रखने जाता है तो उसे वहाँ प्रभा द्वारा रमा को लिखा एक पत्र मिलता है। प्रभा ने पत्र में लिखा कि उसे पत्र लिखने तक का समय नहीं मिल पाता। स्कूल की कल्पनाएँ कैसे हवा हो जाती हैं, यह उसे अब पता चला है। उसे लगा कि उसके बचपन के सभी सपनों के दीये आज यथार्थ के विषैले धुएँ में घुट-घुटकर बुझ गए हों।

समर प्रभा के पत्र को पढ़कर गहन पीड़ा में डूब जाता है। वह प्रभा के एम. ए. करके प्रोफेसर बनने के सुझाव पर ध्यान नहीं देता। वह आपसी समझदारी और घर वालों से कुछ न माँगने का निश्चय करता है। वह प्रभा से कहता है कि वह उसकी हिम्मत बढ़ाती रहे।

अध्याय-4

समर रोजगार कार्यालय में मिले सज्जन की बात प्रभा को बताता है। जब वह दिवाकर के घर जाता है तो वहाँ उसकी उसी सज्जन शिरीष भाई से भेंट हो जाती है। उन्होंने बताया कि वे अपनी बहन को आगरा के मेंटल हॉस्पीटल में भरती कराने आए हैं। उसे हिस्टीरिया के दौरे पड़ते हैं और अब तो वह कभी-कभी पागलों जैसी हरकतें करने लगती है। उन्होंने बताया कि उनकी बहन का विवाह छोटी उम्र मे हो गया था। उसके पति उस समय पढ़ रहे थे, जब उसे पता चला कि उसकी पत्नी अशिक्षित है, तो उसने उसे छोड़ दिया। ज्यादा सोच-विचार और टेंशन के कारण बहन की ऐसी हालत हुई है।

शिरीष भाई कहते हैं कि—"मैं तो सोचा करता था कि यदि कोई बिल पास हो जाए या ये नेता कोई कानून बना दें तो अपनी बहन को तलाक दिलाकर उसका कहीं दूसरी जगह विवाह कर दूँ।'' समर तलाक का विरोध करते हुए कहता है कि इससे तो हमारे समाज का ढाँचा चरमरा जाएगा, शादी-विवाह को लोग मन बहलाव का साधन बना लेंगे। शिरीष ने निष्कर्ष निकाला कि समर भावनाओं के आवेश में घुटने वाला व्यक्ति है।

अखबार बुरी खबरों से भरे पड़े हैं—कहीं दो स्त्रियाँ जलकर मर गईं हैं, तो चार कुएँ में गिर गईं, आठ भाग गईं या टी. बी. से मर गईं। मजबूरी में घुल-घुलकर और घुट-घुटकर मरने को भारतीय नारी की सहनशीलता का नाम देकर उसे नहीं पूजना चाहिए।

समर ने पूछा हमारे ऋषि मुनियों के बनाये गये सारे धर्म-नियम आपकी निगाह में बेकार हैं? शिरीष भाई की राय में तो सब बेकार हैं। उन्होंने सिगरेट जलाई। समर ने जब हिन्दू धर्म की श्रेष्ठता के विषय में पूछा तो उनका यही विचार था कि अन्य धर्म, जैसे—ईसाई धर्म भी लोगों के हित के लिए, स्कूल और अस्पताल खोलता है। यहाँ तो बस तपस्या कर लेते हैं। समर की बातों व तर्कों पर शिरीष भाई उसका मजाक उड़ाते हैं तथा उसे पुरातन पंथी सोच वाला सिद्ध करते हैं। उसे अपनी बातों से सहमत होता देख शिरीष भाई साहब ने कहा—"तब तो आप कच्चे हिन्दू प्रतीत होते हैं क्योंकि सच्चा हिन्दू सोचता और जाँचता कुछ नहीं बल्कि चाहे आध्यात्मिक ज्ञान हो अथवा रिश्वत और ब्लैक का रुपया उनको सहज भाव से स्वीकार करता रहता है।" शिरीष भाई ने समर को राय दी कि वे खूब पढ़े। अपने बारे में उन्होंने बताया कि वे सरकारे हिंद में डेढ़ सौ रुपये वेतन पाने वाले क्लर्क हैं। समर ने दिवाकर से उसके लिए किसी नौकरी का प्रबंध करने का आग्रह किया। दिवाकर ने उसे आश्वासन दिया कि वह इस विषय में अपने बाबूजी से चर्चा करेगा।

अध्याय-5

समर को यह वाद-विवाद अच्छा नहीं लगा। वह अपने कानों में अँगुली देकर घर से बाहर निकल आया जिससे उसे पीछे से आने वाली आवाजें सुनाई न पड़ें और वह आकर एक पार्क में लेट गया। लेटे-लेटे वहाँ उसे आज घर में घटित घटना याद आने लगी, जिसमें उसके अनुज अमर ने प्रभा से रोटियों में अधिक घी न लगाने के तथ्य को लेकर झगड़ा किया था और कहा था, "यों क्यों नहीं कहती कि सारा अपने खसम को चटा दिया? हमें क्या दिखता नहीं कि घर में किसी को मिले या न मिले किन्तु समर भैया की दाल में खूब घी डाला जाता है।" यह आरोप सुनकर समर को क्रोध आ गया और उसने कहा—"बेशर्म, बात करने की तमीज नहीं है।" कहते हुए समर ने अमर की पीठ पर एक लात मार दी। अमर भनभनाता हुआ थाली फेंककर बाहर चला गया और जोर-जोर से रोने लगा।

इस बात को लेकर अम्मा समर पर बिगड़ उठी और अमर का पक्ष लेते हुए कहा—"हाँ-हाँ बेटा, हम तमीज सलीका काहे को जानेंगे? वो तो तूने एक दिन में उस कलमुँही से सीख लिया है न! गुरु तो तुझे अब मिली है।" इस तरह की जली कटी बातें कहकर वे रोने भी लगीं। समर ने जब प्रभा के सारे दिन काम में लगे रहने की शिकायत की तो भाभी ने आकर प्रभा को जबरदस्ती पटरे से हटाते हुए कहा—"हटो बहूरानी, तुम्हें तकलीफ़ हो रही होगी।" बेचारी प्रभा की आँखों से आँसुओं की झड़ी बह उठी थी। अम्मा ने भी उलाहना देते हुए कहा था—"कमाकर तो कुछ लाता नहीं है, और ऊपर से रौब झाड़ता है।" भाभी ने अपनी रोती हुई बच्ची को प्रभा से छीनते हुए कहा—"इसकी किस्मत में रोना बदा है तो रो लेगी, मरना बदा है तो मर जाएगी परन्तु अम्मा को तो शांति मिल जाएगी।" प्रभा को ऐसा लगा कि इस सारे काण्ड की जिम्मेदारी उस पर डाल दी गई है और समर हक्का-बक्का खड़ा इस सारी स्थिति को देखता रहा।

रात को जब समर घर लौटा तो उसके माथे में दर्द था, घर में सब सो चुके थे। अपनी कोठरी में जाकर बिना कपड़े उतारे ही वह जा पड़ा। प्रभा आकर उसके पास बैठ गई और बोली—"खाना नहीं खाओगे?" समर ने प्रभा से पूछा कि उसने खाना खा लिया क्या! प्रभा ने नहीं में उत्तर दिया। समर का हृदय दु:ख से भरा था वह रोते हुए बोला, "प्रभा ..... प्रभा बताओ, हम क्या करें, कहाँ चलें?"

अध्याय-6

दिवाकर ने इस शर्त पर समर के लिए नौकरी की व्यवस्था कर दी थी कि वह थर्ड ईयर में प्रवेश लेगा। नौकरी प्रेस में प्रूफ रीडिंग की थी। सुबह पाँच बजे से ग्यारह बजे तक का कार्यकाल निश्चित हुआ और वेतन 75 रु. महीने का तय हुआ और बाद में बढ़ भी सकता है। समर तो खुशी से उछल पड़ा और दिवाकर का धन्यवाद करता है। वह दिवाकर से 20 रुपये उधार लेता है ताकि प्रभा के लिए एक धोती खरीद सके।

उस दिन शिरीष भाई भी आ गए थे जिसने समर की चोटी पर व्यंग्य किया। दिवाकर उस दिन के वाद-विवाद को इसका कारण बताता है। भारतीय संस्कृति को लेकर फिर बहस शुरू हो गई। ब्रह्म ज्ञान की चर्चा के साथ ही मायावाद पर चर्चा हुई। शिरीष द्वारा विवेकानन्द सम्बन्धी एक संस्मरण भी सुनाया गया कि साधु का सच्चा धर्म समाज सेवा है। आत्म-साधना से समाज का कुछ भी भला नहीं होता है। इस बात को उपहासास्पद बताया गया कि चींटी और हाथी में एक समान जान मानते हुए मानव की समानता की बातें करने वाले सामान्यत: शूद्रों और नारियों के प्रति कटु व्यवहार करते हैं और उन पर अत्याचार करते हुए उनका शोषण भी करते हैं।

समर ने प्रभा के लिए एक धोती खरीदी, प्रभा के लिए लाई गई एकमात्र धोती घर में महाभारत का कारण बन गई। उधार के पैसे से धोती खरीदी गई थी और उसमें 12 रुपये लग गए थे। अम्मा को चोट पहुँची। समर ने अपने बड़े भाई धीरज से अपनी पढ़ाई जारी रखने की इच्छा प्रकट की तो उन्होंने बाबूजी से पूछ लेने को कहा और खर्चे का दुखड़ा भी रोया। जब प्रभा को पता लगा कि समर की नौकरी लग गई है तो वह खुशी से उछल पड़ी। धोती लाने पर प्रभा नाराज भी हुई और खुश भी। समर की कल्पना के तो जैसे पंख ही लग गए थे। वह सोचता है कि अगर एम. ए. में प्रथम श्रेणी आ गई तो वह कहीं न कहीं प्रोफेसर लग जाएगा। प्रभा ने भी कॉलेज ज्वाइन करने को कहा। रात को समर ने प्रभा को शिरीष भाई साहब की बातें बताईं, पर उनकी बात बीच में ही टूट गई क्योंकि किसी ने किवाड़ों को जोर से धक्का दिया। समर ने बाहर जाकर देखा बाबूजी जोर से चिल्ला रहे थे—"जवानी हमें भी आई थी, पर ऐसी नहीं कि न दिन देखें न रात! जब देखो तब बहू को लिए पड़े हैं। अरे, घर में बच्चे हैं, बड़े-बूढ़े हैं। किसी का तो लिहाज करो ..... सारा घर नहा लिया, धो लिया, काम काज सारा खत्म हो गया और यहाँ अभी गुलछर्रे ही उड़ रहे हैं।" ऐसा लगता था कि जैसे वे लोग कोई घोर अनैतिक और अनुचित कार्य करते हुए रंगे हाथों पकड़ लिए गए हों। बाबूजी अपना अलाप समाप्त करके चले गए तब प्रभा धीरे से निकलकर नीचे आई।

अध्याय-7

समर की नौकरी से घर का परिवेश बदल गया। दो दिन में ही समर और प्रभा के प्रति सबका व्यवहार नरम हो गया। अम्मा ने कहा कि—यदि समर सहारा देगा तो घर की मुसीबतें कम हो जाएँगी; किन्तु समर उनकी सहायता कैसे कर सकता था। उसे बीस रुपये तो दिवाकर को ही देने थे, पच्चीस-तीस रुपये तो पढ़ाई में ही निकल जाएँगे, अपने कपड़े भी सिलवाने थे, प्रभा के लिए भी धोती ब्लाउज लाना है। समर और प्रभा फिर बातें करने लगे घरवालों की।

समर ने अपनी नौकरी पर जाना शुरू कर दिया, प्रभा भी उसके साथ ही सुबह तीन बजे उठ जाती और रात को देर से सोती अर्थात् प्रभा भी चौबीस घण्टे बैल की तरह काम में जुटी रहती थी। काम शुरू-शुरू में तो बड़ा रोचक लगा, किन्तु बाद में इससे बोरियत होने लगी। प्रेस में शोरगुल इतना अधिक था कि सिर में दर्द होने लगता था पर वहाँ काम करने वाले लोग इतने अधिक दिलचस्प थे कि बाद में मन लगने लगा। बारह बजे के करीब जब समर कड़कती धूप में पसीने से तरबतर आता तो उसे, भूख के मारे चक्कर आ रहे होते। किन्तु प्यास लगने के कारण दो गिलास पानी पहले ही पी लेता फिर भूख नहीं लगती थी। प्रभा भी उसके इंतजार में भूखी बैठी रहती, दोनों साथ-साथ खाना खाते।

रिजल्ट आया तो समर द्वितीय श्रेणी में पास हो गया पर अमर तो फेल हो गया, अमर रो रहा था, पूरे घर में मुर्दनी सी छा गयी। भाभी और भाई साहब के उलाहने बढ़ गए वे कहते—अपने बाल-बच्चों की चिंता छोड़ इन मुस्टंडों को हम कहाँ तक पढ़ाएँ-लिखाएँ। समर को दौड़ धूप करके पुराना विद्यार्थी होने के कारण कॉलेज में प्रवेश मिल गया। प्रेस से छूटते ही उसे कॉलेज भागना पड़ता। प्रेस जाने की तैयारी में प्रभा को प्रात: तीन साढ़े तीन बजे जगकर भोजन तैयार करना पड़ता था। समर उस महीने कॉलेज के लिए कपड़े बनवाने तथा फीस देने के कारण इस स्थिति में नहीं था कि घर में किसी और की मदद कर सके। घरवालों को इसके विपरीत उससे आर्थिक मदद की आशाएँ थीं। समर प्रभा को काम-करता देख विचलित हो उठता है वह कहता है—वह कहीं क्लर्की देखेगा जिससे कि दस बजे जाकर पाँच बजे आ सकता है, प्रभा ने समर

से कहा—"मुझे तुम अभी नहीं जानते। मुझमें बहुत ज्यादा जीवनी शक्ति है। इससे भी ज्यादा मुसीबतों में मैं विचलित नहीं हो सकती।" समर प्रभा के सभी कष्टों को दूर करने की बात कहता है।

अध्याय-8

समर के घर में मामा जी आए हुए हैं। वे अमर के लिए कोई रिश्ता लेकर आए हैं। समर का विवाह भी मामा जी ने ही तय करवाया था। मामाजी कह रहे थे कि आप स्वयं लड़की देख लेते तो अच्छा होता, और बाकी बातें खुद ही कर लें। समर ने बाबू जी से कहा—"बाबू जी, तुम्हें जल्दी क्या पड़ी है? अभी वह फेल हो चुका है।" बाबू जी ने समर को डाँट दिया। मामा जी ने कहा फेल-पास तो लगा ही रहता है। लेन-देन की बात साफ़ कर लेना। समर वहाँ से उठने लगा तो मामा जी ने हाथ पकड़कर उसे बैठा लिया और उसे समझाते हुए कहा कि वह घर में रुचि लेना शुरू कर दे। हर घर में स्त्रियों में लड़ाई-झगड़े और मन मुटाव होते रहते हैं परन्तु उन पर अधिक चिंता नहीं करनी चाहिए। समर ने मामा जी से आगे पढ़ने की बात की। मामा जी ने कहा पढ़ने की कौन मना करता है? पर सब कुछ घर की हालत देखकर किया जाता है। बाबू जी जोर से बोले—"तुम किस पत्थर को समझा रहे हो चन्दन? कहा है, सीख दीजिए ताहि को जाको सीख सुहाय .....।" समर वहाँ से चला आया।

समर ने प्रभा को मामा जी की बातें बताईं। बहू को दबा कर रखा करो आदि। समर को दुर्भाग्यवश प्रेस वालों ने भी अभी तक वेतन नहीं दिया है वह उधार लेकर 61 रुपये खर्च कर चुका था। क्रोधवश समर प्रेस वालों को गालियाँ देने लगता है प्रभा हँसती है कि वह बूढ़ी स्त्रियों की तरह गालियाँ बक रहा है। कुछ देर बाद समर घर से बाहर चला गया और सड़कों पर भटकता रहा। अचानक वहाँ उसे दिवाकर मिल जाता है, शिरीष भाई भी साथ थे। समर ने दिवाकर को बताया कि उसके घर में कितने झंझट है। शिरीष भाई बोले—"भाई समर जी, आपकी अपनी और दिवाकर की वास्तविक स्थिति जानकर एक बात मेरी समझ में आती जा रही है—इस संयुक्त परिवार की परम्परा को तोड़ना ही होगा।"

शिरीष के साथ बातचीत करते समय प्रभा की आकांक्षाओं का संदर्भ आता है व्यक्तित्व, स्वार्थ, कमाई, व्यावहारिक अनुभव, माँ-बाप, दुर्घटना, बोलचाल बंद होना आदि। विभिन्न स्थितियों पर चर्चा होती है। समर शिरीष की विश्लेषण प्रतिभा पर चकित होता है। समर सोचता है कि काश इस सबको सुनने के लिए यहाँ प्रभा भी होती।

अध्याय-9

समर प्रभा के विषय में और उसके प्रति मन में प्यार, विवशताओं और कष्टों के प्रति दया-भाव से सोचता है। तभी अचानक प्रभा आ जाती है और समर से वह कहती है कि वह उसके पैर दबा दे क्योंकि आज समर ने बहुत काम किया है। पर समर को उस पर दया आई कि वह स्वयं इतना काम करती है। समर ने उससे पैर दबाने को मना किया। यह जानकर कि प्रभा ने उस दिन व्रत रखा है, समर उसे समझाता है कि बीमार मत पड़ जाना। वह कहता है कि मुझे व्रत वगैरा में विश्वास नहीं है। प्रभा तर्क देती है कि व्रत तो एक संकल्प को याद दिलाए रखने का बहाना मात्र होता है। समर के डाँटने पर उसने रोते हुए कहा कि चाहे मुझे कल डाँट लेना किन्तु आज कुछ भी मत कहिए।

समर ने प्रभा को बताया कि दिवाकर की पत्नी ने उसे कई बार बुलाया है। एक दिन वह चले। आजकल शिरीष भाई साहब भी वहीं हैं। उनकी बातों के बारे में समर ने प्रभा को बताया तो प्रभा ने शिरीष भाई की बातों का समर्थन किया। समर ने सोचा कि प्रभा को समय-समय पर शिरीष की बातें बताता रहेगा तो वह बहुत कुछ सीख जाएगी। प्रभा ने पूछा कि आखिर वे मानते किसको हैं। समर ने भी यही बात उनसे पूछी थी तो शिरीष ने जवाब दिया था—"ईश्वर, धर्म, अन्तरात्मा और संस्कार के बाद जो कुछ भी बाकी बच जाता है, मैं उन सबको मानता हूँ अगर मानने लायक सारी बात इन्हीं चार पाँच शब्दों की बपौती है, तो यह समझ लीजिए कि मैं किसी को नहीं मानता।" अपने पुरखों के बारे में शिरीष भाई की अपमानजनक बातें समर को अच्छी नहीं लगीं। लेकिन उनका गुस्सा देखकर समर को भी जोश आ जाता है कि हम लोग उन झूठों, मक्कारों, ठगों और नपुंसकों की औलाद हैं सिर्फ अतीत में जीते थे। न उन्हें अपने समाज की समस्याओं का ख्याल था, न अपने समय का ..... हमारे ये पूर्वज खुद गोबर-संस्कृति के अजायबघर थे। समर की बातें सुनते सुनते लगा प्रभा सो गई। उस रात समर को ज्ञात हुआ कि प्रभा ने कमर में कोई गोली जैसी चीज बाँध रखी है। सख्ती से पूछने पर प्रभा ने बताया कि अवस्थी जी की बीवी के कहने पर अम्मा और भाभी ने सैयद बाबा की धूनी बाँधी है इससे संतान की कामना पूरी हो जाएगी। समर हँसते हुए भी नाराज हो उठा और बोला—अपने खाने का तो प्रबन्ध नहीं है ऊपर से यह बच्चे की बला और पाल लो। यह कहकर समर ने प्रभा की कमर मे बँधी पोटली तोड़कर गली में फेंक दी।

समर क्रोध में कुढ़ता हुआ खाट की पाटी से सिर टिकाए अपना माथा कूट रहा था और प्रभा घुटनों में सिर दबाए रो रही थी, उसने कहा सारा दिन अम्मा और भाभी उसे बाँझ-बाँझ कहकर कोसती रहती हैं, भाभी अपनी बेटी के पास उसे झाँकने नहीं देती वे उसकी छाया से भी बच्ची को बचाती हैं।

अध्याय-10

प्रभा ने आकर समर से पूछा—"यहाँ क्यों बैठे हो सुबह से? कुछ काम नहीं है? कॉलेज नहीं जाना है आज?" समर प्रेस से आकर सुस्त और उदास सा ऊपर छज्जे पर ही बैठ गया था। समर ने दु:खद समाचार सुनाया कि उसकी वह प्रेस वाली नौकरी छूट गई है तथा पचहत्तर रुपये कहकर साठ रुपये दिये हैं। पार्ट टाइम कहकर पूरा टाइम काम लिया। प्रभा ने नीचे जाते हुए कहा कि वह चिन्ता न करे, उसके पास थोड़ा बहुत जेवर है वह किस काम आएगा। प्रभा के मना करने पर भी अम्मा जी ने बड़े प्यारपूर्वक प्रभा को चूड़ी पहनवा दीं। क्रोध में भरा समर नीचे उतरा और प्रभा की दोनों कलाइयों को आपस में टकराकर उसकी सारी चूड़ियाँ तोड़ डालीं। चूड़ियों के टुकड़े समर की हथेली और अँगुलियों में चुभ गए थे, खून निकल आया था, समर के दोनों हाथ खून में तर हो गए। उसके बाद वह ऊपर लौट गया।

बाबू जी के पूछने पर कि—"तुम्हारी नौकरी किस तारीख से लगी थी।" समर ने अपनी नौकरी छूटने का समाचार दे दिया। अम्मा ने उलाहना दिया कि हम तुझसे माँग थोड़े ही रहे हैं, जो नौकरी छूटने का बहाना कर रहा है। समर के यह कहने पर कि परोक्ष रूप से माँग ही रहे हो, बाबू जी उस पर बुरी तरह बिगड़ उठे, उसे डाँटते हुए गाली देने लगे—"हरामी! तुम्हें पाला-पोसा, पढ़ाया-लिखाया, सब इसलिए कि तू यों हमारी इज्जत उतार कर रख दे। छाती पर चढ़-चढ़ कर सीधी-सीधी बात करो तो कटखने पागल कुत्ते की तरह भौंके।"

घर के सारे लोग इकट्ठे हो गए और बाहर की स्त्रियाँ इकट्ठी होकर पूछने लगीं कि क्या बात हो गई? बाबू जी अपशब्द कहते रहे। उन्होंने कहा तुम्हें अपनी पढ़ाई और बहू से साज शृंगार के अलावा किसी बात की चिंता ही नहीं है। समर ने जब यह कहा कि बहू के लिए कौन-सा साज शृंगार लाया हूँ तो उसके पिता उसको लात, घूँसों और थप्पड़ों से पीटने लगे। अन्ततः उन्होंने कहा—"निकल जा मेरे घर से, निकल जा! हट जा, दूर मेरी आँखों से ..... डूब मर कहीं कुएँ तालाब में कमीने।" अम्मा ने उसे चुप होने को कहा। समर ने कहा कि वह उस नरक में और अधिक नहीं रह सकेगा।

प्रातःकाल चार बजे प्रभा समर को जगा देती है। समर अपना टिफिन कैरियर लेकर सीढ़ियाँ उतर जाता है। दरवाजे पर एक तार वाला खड़ा था। समर ने तार लिया जिसमें मुन्नी के देहान्त का दुःखद समाचार था। उसने समझ लिया कि उन्होंने मुन्नी को मार दिया। वह रेलगाड़ी में बैठकर प्रेस जाने लगा। वह रेलगाड़ी से देर से उतरा क्योंकि वह अपने विचारों में खोया था, उसे ऐसा लगा जैसे वह रेल के इंजन के साथ घिसटता जा रहा है। फिर उसके मस्तिष्क में दूसरा विचार आता है कि वह मुंबई चला गया है, फिर यह विचार आया कि वह साधु बन गया है और ऋषिकेश में काली कमली वाले बाबा के आश्रम में पड़ा हुआ है।

समर सोचता है कि वह किसी डिब्बे में चला जाए या रेलगाड़ी के आगे कूदकर आत्महत्या कर ले। तभी उसे विधवा के वेश में एक औरत कई बुढ़ियों के साथ आकर मेरी कुटी के सामने खड़ी हो जाती है। हर की पौड़ी पर नहाते हुए एक औरत को देखता हूँ कि, अरे यह तो प्रभा है प्रभा मेरी दाढ़ी और मोटे केबल के कारण मुझे नहीं पहचान पाती है। फिर एक साथ सारी तस्वीरें गडमड होकर एक बड़ी तस्वीर में बदल जाती है। अखबार में मेरी तस्वीर छपी है—"प्रिय बेटा समर, तुम्हारी माँ की तबियत बहुत खराब है एक बार तुम्हें देखना चाहती है।" समर को लगा जैसे वह तेज़ी से चक्कर खाते चाक पर खड़ा है—भीतर कोई दुहराए चला जा रहा है.....कूद पड़ .....चढ़ जा! कूद पड़! ..... चढ़ जा! घबराकर वह ऊपर देखता है ..... सारा आकाश डग-डग करता घूमने लगता है।

❑❑

नाटक

अध्याय-5

आषाढ़ का एक दिन

नाटककार का परिचय

मोहन राकेश को आधुनिक नाटक का मसीहा कहा जाता है। इनका जन्म 8 जनवरी, 1925 को हुआ था। उन्होंने पंजाब विश्वविद्यालय से हिन्दी और अंग्रेजी में एम.ए. किया तथा जीविकोपार्जन के लिए उन्होंने अध्यापन का कार्य किया। ये कुछ वर्षों तक सारिका के सम्पादक भी रहे तथा इन्हें 'संगीत नाटक अकादमी' पुरस्कार से सम्मानित किया गया। नई दिल्ली में 3 जनवरी, 1972 में इनका आकस्मिक निधन हो गया।

मोहन राकेश ने हिन्दी नाटक को नई दिशा और दशा दी। मोहन राकेश का विचार था कि नाटक एक दृश्य काव्य है। इसकी दृश्यमानता ही इसे साहित्य की अन्य विधाओं से अलग सिद्ध करती है। इसलिए नाटक को 'पंचम वेद' भी कहा गया है।

मोहन राकेश के नाटकों में जीवन की अनुभूति और समसामयिक सन्दर्भों का आकलन होता है। इनका सम्पूर्ण साहित्य अस्तित्व बोध, नर-नारी सम्बन्धों, अहंवादी चेतना, अकेलेपन, विसंगति, अलगाव, अजनबीपन, तनाव, संत्रास आदि समस्याओं के इर्द-गिर्द घूमता है। समाज के संवेदनशील व्यक्ति और समय के प्रवाह से एक अनुभूति के क्षण चुनकर उन दोनों के ही सार्थक सम्बन्धों को खोज निकालना इनकी कहानियों एवं नाटकों की विषय-वस्तु है।

साहित्य-सृजन—मोहन राकेश ने कहानी, उपन्यास, नाटक, एकांकी, यात्रा-वृत्तांत, निबंध, तथा डायरी आदि के क्षेत्र में साहित्य सृजन किया है। उनके साहित्यिक सृजन को निम्नलिखित शीर्षकों में देखा जा सकता है।

कहानीकार के रूप में—हिन्दी साहित्य में कहानीकार के रूप में मोहन राकेश का विशेष स्थान है। उन्होंने अपने विद्यार्थी जीवन से ही कहानियाँ लिखना प्रारम्भ कर लिया था। उनका पहला कहानी संग्रह 'इन्सान के खण्डहर' है। जिसमें उन्होंने मुख्य रूप से व्यापारी वर्ग के प्रति क्रोध और मजदूर वर्ग के प्रति अपनी सहानुभूति को दर्शाया है। उनकी अधिकांश कहानियों में जीवन के सत्य की खोज है तो पात्रों के द्वारा समाज में दुःख-दर्द को भी दिखाया गया है। राकेश जी द्वारा प्रकाशित कहानी संग्रह इस प्रकार हैं—

1. इन्सान के खण्डहर सन् 1950
2. नए बादल सन् 1957

3. जानवर और जानवर सन् 1958
4. एक और जिंदगी सन् 1961
5. फौलाद का आकाश सन् 1966
6. आज के साए सन् 1967
7. मेरी प्रिय कहानियाँ सन् 1971
8. चेहरे तथा अन्य कहानियाँ सन् 1972
9. क्वार्टर और अन्य कहानियाँ सन् 1972
10. वारिस तथा अन्य कहानियाँ सन् 1972
11. पहचान तथा अन्य कहानियाँ सन् 1972

नाटककार के रूप में—मोहन राकेश को सर्वाधिक प्रसिद्धि नाटककार के रूप में ही प्राप्त हुई। 'आषाढ़ का एक दिन' उनका प्रथम नाटक था और इस नाटक ने उन्हें सफ़लता की नई ऊँचाइयों तक पहुँचा दिया। राकेश जी के नाटक कविता की तरह ही आनंद देते हैं। उन्होंने सामाजिक और ऐतिहासिक दोनों ही प्रकार के नाटकों की रचना की। उनके कुल तीन नाटक और एक एकांकी संग्रह प्रकाशित हुए हैं। जिनमें 'आषाढ़ का एक दिन' तथा 'लहरों के राजहंस' ऐतिहासिक नाटक हैं। 'आधे-अधूरे' एक सामाजिक नाटक है। उनके ऐतिहासिक नाटकों में आधुनिकता का भी समावेश है। राकेश जी द्वारा लिखे गये नाटक अग्र प्रकार हैं—

1. 'आषाढ़ का एक दिन' प्रकाशन वर्ष सन् 1958
2. लहरों के राजहंस ,, सन् 1963
3. आधे अधूरे ,, सन् 1969
4. पैर तले जमीन (अपूर्णनाटक) ,, सन् 1973
5. अण्डे के छिलके तथा अन्य बीज नाटक (एकांकी) ,, सन् 1973

उपन्यासकार के रूप में—मोहन राकेश एक सफल कहानीकार व नाटककार होने के साथ-साथ एक सफल उपन्यासकार भी थे। उन्होंने सबसे पहला उपन्यास 'स्याह और सफेद' लिखा जो किसी कारण वश प्रकाशित न हो सका। उन्होंने जितने भी उपन्यास लिखे उनमें ऐसे टूटे हुए व्यक्तित्व ही दिखाई देते हैं जो सदैव ही जुड़ने की कोशिश में लगे रहे, परन्तु कभी जुड़ नहीं पाए और एक खालीपन ही हमेशा उनके साथ रहा। 'अन्तराल' नामक उपन्यास में उन्होंने सामाजिक सम्बन्धों के तनाव को दर्शाया है। उनका यह उपन्यास अपनी भाषा और शैली के कारण अद्वितीय माना जाता है। राकेश जी द्वारा लिखे गये उपन्यास इस प्रकार हैं—

1. अँधेरे बंद कमरे प्रकाशन वर्ष सन् 1961
2. न आने वाला कल ,, सन् 1968
3. अन्तराल ,, सन् 1972
4. स्याह और सफेद—अप्रकाशित
5. काँपता हुआ दरिया ,,
6. कई एक अकेले ,,
7. नीली रोशनी की चाह ,,

निबन्ध—

1. परिवेश 2. रंगमंच और शब्द 3. कुछ और स्वीकार: नई निगाहों के सवाल हाशिये पर 4. बकलम खुद

यात्रा वृत्तांत—

1. आखिरी चट्टान तक 2. पतझड़ का रंगमंच 3. ऊँची झील 4. पतझड़

अनुदित ग्रंथ—

1. अभिज्ञान शाकुन्तलम् 2. एक और चेहरा 3. मृच्छकटिकम्

इस प्रकार मोहन राकेश ने अपने छोटे से जीवन काल में कई उच्च कोटि की रचनाओं का सृजन किया।

'आषाढ़ का एक दिन'

'आषाढ़ का एक दिन' मोहन राकेश द्ववारा लिखित एक ऐतिहासिक नाटक है। एक नाटककार के रूप में मोहन राकेश ने सबसे पहले 'आषाढ़ का एक दिन' नामक नाटक की रचना की है। यह नाटक उन्होंने संस्कृत के विश्वविख्यात कवि कालिदास के जीवन को लेकर लिखा है। इसमें इतिहास तथा कल्पना का सुन्दर मिश्रण है। 'आषाढ़ का एक दिन' नाटक तीन अंकों में विभाजित है। इसकी कथावस्तु का संक्षिप्त सार इस प्रकार है—

नाटक का सारांश

प्रथम अंक—(कालिदास के आगमन तक की घटना)

नाटक के प्रथम अंक का प्रारम्भ घनघोर वर्षा के साथ हुआ है। पर्दा उठने पर अंबिका के घर का कमरा नजर आता है। वृद्ध स्त्री अम्बिका साधारण से घर में धान फटक रही है तभी सामने के द्वार से उसकी पुत्री मल्लिका भीगे हुए कपड़ों में काँपती-ठिठुरती अन्दर आती है, जो अपने प्रिय कालिदास से आषाढ़ के पहले दिन की बारिश में भेंट करके आती है। वह बाहर हो रही वर्षा और उसमें भीगने के आनंद का वर्णन करती है। वह अपनी माँ को कालिदास के संबंध में भी सारी बात बताना चाहती है पर उसकी माँ अंबिका बदनामी के कारण उसकी बात सुनना नहीं चाहती, वह अपने काम की व्यस्तता प्रदर्शित करती हुई मल्लिका के प्रति अपना रोष प्रकट करती है।

तभी बाहर घोड़ों की टापों की आवाज सुनाई देती है। मल्लिका अपनी माँ से पूछती है कि ये लोग कौन है? अम्बिका कहती है कि संभवत: वे राज्यकर्मचारी हैं जो वर्षों में कभी-कभी ही दिखाई देते हैं। ये जब भी दिखाई देते हैं कोई न कोई अनिष्ट होता है। ये लोग तभी आते हैं जब किसी महामारी या युद्ध की सूचना देनी होती है। वह यह भी बताती है कि तुम्हारे पिता की मृत्यु के समय भी ये आकृतियाँ देखी गई थीं।

अंबिका ने अग्निमित्र को मल्लिका के विवाह का प्रस्ताव लेकर कहीं भेजा था, परन्तु मल्लिका के चरित्र पर संदेह होने के कारण वह असफ़ल होकर लौट आता है, इस बात पर मल्लिका नाराज होकर रोने लगती है। जब मल्लिका को पूरी बात पता चलती है तब मल्लिका अंबिका से कहती है कि वह विवाह नहीं करना चाहती फिर वह उसके विवाह का प्रयास क्यों करती है। जीवन है, किसी अन्य को उसके जीवन का निर्णय सुनाने का अधिकार नहीं है। उसी समय कालिदास के आने का स्वर सुनाई देता है और अंबिका भीतर चली जाती है।

मातुल के प्रवेश तक की घटना

उसी समय कालिदास हिरनी के एक घायल शिशु को लेकर आता है। कालिदास मल्लिका को पात्र में दूध लाने के लिए कहता है। कालिदास उस हिरण के बच्चे से बात करते हुए उसे दूध पिलाने का प्रयास करता रहता है। उसी समय राज-पुरुष दंतुल का प्रवेश होता है। दंतुल कालिदास से पूछता है कि मेरे बाण से घायल हिरण को यहाँ क्यों लाए हैं? उसे वापस कर दो परन्तु कालिदास उसकी माँग को अस्वीकार कर देता है।

मल्लिका दंतुल द्वारा कालिदास के ऊपर लगाए गए चोरी के आरोप का विरोध करती है। उस समय कालिदास यह कहकर उस हिरण के बच्चे को देने से इन्कार कर देता है कि यह प्रकृति की सम्पत्ति है। कालिदास मल्लिका से हरिणशावक को बिस्तर पर सुलाने के लिए कहता है, तब अम्बिका यह कहकर इन्कार कर देती है कि बिस्तर मनुष्यों के सोने के लिए है, पशुओं के सोने हेतु नहीं। अंबिका कालिदास को भला-बुरा कहती है तो वह हिरनी के बच्चे को लेकर अपने घर जाने लगता है। तभी दंतुल भी तलवार लेकर उसके पीछे जाने को उद्यत होता है। तभी मल्लिका के कथन से उसे पता लगता है कि वह व्यक्ति कालिदास है, यह सुनकर दंतुल आश्चर्यचकित हो जाता है।

दंतुल मल्लिका को बताता है कि ऋतुसंहार के लेखक कालिदास को उज्जयिनी के सम्राट ने सम्मान स्वरूप राजकवि के रूप में प्रतिष्ठित करने के लिए बुलाया है। इसी उद्देश्य से आचार्य वररुचि यहाँ आए है। दंतुल की बात से मल्लिका प्रसन्न हो जाती है। दंतुल कालिदास से क्षमा माँगने चला जाता है। मल्लिका अपनी माँ अंबिका को यह खुशखबरी देती है। अंबिका कालिदास को संदेह की दृष्टि से देखती है और उसके दोषों का विवेचन करने लगती है। वह मल्लिका से कहती है कि यदि कालिदास का प्रेम सच्चा है तो वह तुमसे विवाह क्यों नहीं कर लेता? मल्लिका माँ से कहती है कि अभावग्रस्त जीवन में विवाह की कल्पना करना भी असम्भव है। अंबिका कहती है कि एक बार सम्पन्न हो जाने पर वह तुम्हें भुला देगा फिर मेरे बाद तुम अकेले जीवन कैसे काटोगी? मल्लिका माँ से कहना चाहती है कि आज कालिदास का जीवन एक नई दिशा ग्रहण कर रहा है। ऐसी परिस्थिति में वह अपने स्वार्थ व लाभ की बात नहीं कर सकती। अंबिका और मल्लिका की इसी बात-चीत के दौरान ही मातुल के शब्द सुनाई देते हैं।

उसी समय कालिदास का मामा मातुल अम्बिका को पुकारते हुए प्रवेश करता है। मातुल कहता है कि वह पूरे गाँव में घोषणा करने वाला है कि कालिदास से अब मेरा कोई सम्बन्ध नहीं हैं, क्योंकि वह राज-सम्मान प्राप्त करने से इंकार कर रहा है। तभी निक्षेप वहाँ आकर कहता है कि आचार्य मातुल भी प्रतीक्षा कर रहे हैं। मातुल वहाँ से चला जाता है। निक्षेप मल्लिका को बताता है कि कालिदास जगदंबा के मंदिर में बैठा है। उसका हठ है कि जब तक उज्जयिनी से आए अतिथि लौट नहीं जाएँगे तब तक वह मंदिर में ही बैठा रहेगा। निक्षेप कहता है कि 'मुझे विश्वास है कि उन्हें राजकीय सम्मान का मोह नहीं है। वे सचमुच इस पर्वत-भूमि को छोड़ कर नहीं जाना चाहते।'' मल्लिका अम्बिका के विरोध के बावजूद कालिदास को समझाने के लिए निक्षेप के साथ चली जाती है।

मल्लिका के जाने के बाद विलोम का आगमन होता है वह मल्लिका की माँ अम्बिका को कालिदास के विरुद्ध भड़काता है और कहता है कि उज्जयिनी जाने से पहले मल्लिका और कालिदास का विवाह होना जरूरी है। तभी कालिदास मल्लिका के साथ वहाँ आता है। मल्लिका वहाँ उस समय विलोम की उपस्थिति नहीं चाहती, किन्तु विलोम वहाँ से नहीं जाता, वह बार-बार कालिदास पर व्यंग्य करता है। अन्त में विलोम कालिदास और मल्लिका के विवाह की बात कहकर चला जाता है।

मल्लिका कालिदास से राज-सम्मान स्वीकार करने को कहती है। कालिदास कहता है—'मैं अनुभव करता हूँ कि यह ग्राम प्रांतर मेरी वास्तविक भूमि है। मैं कई सूत्रों से इस भूमि से जुड़ा हूँ। उन सूत्रों में तुम हो, ये आकाश और मेघ हैं। यहाँ की हरितिमा है, हिरणों के बच्चे हैं, पशु पालन है। यहाँ से जाकर मैं अपनी भूमि से उखड़ जाऊँगा।'' मल्लिका कालिदास को नई भूमि तलाशने की प्रेरणा देती है। मल्लिका के बार-बार कहने पर कालिदास उज्जयिनी जाने के लिए तैयार हो जाता है। कालिदास के जाने पर मल्लिका रोने लगती है। उसकी

माँ अम्बिका उसे तसल्ली देती हैं और अपनी सिसकियाँ दबाकर अपनी माँ से कहती है, यह सुख के आँसू है दु:ख के नहीं। बादलों की गरज के साथ वर्षा तेज हो जाती है। यहीं पर नाटक का प्रथम् अंक समाप्त हो जाता है।

द्वितीय अंक

(अनुनासिक और अनुस्वार के प्रस्थान तक की घटना)

कालिदास के गाँव से चले जाने के बाद अंबिका बीमार हो जाती है। मल्लिका के घर की हालत बिगड़ जाती है, घर टूट-फूट गया है। मल्लिका अपनी वृद्ध माँ की सेवा, घर की चिंता और कालिदास के वियोग में कमज़ोर हो जाती है।

एक दिन निक्षेप उनका हाल-चाल पूछने आता है। वह कालिदास की शिकायत करता है। कि वह उज्जयिनी जाकर ग्राम को बिल्कुल ही भूल गया है वह इस बात से दु:खी है कि उसने ही कालिदास को उज्जयिनी भेजने के प्रयास किए, पर मल्लिका को इस बात की प्रसन्नता है कि यहाँ रहकर कालिदास ने सिर्फ ऋतुसंहार की रचना की बल्कि वहाँ और भी कई नए काव्यों की रचना की है, जिनका वहाँ की रंगशालाओं में अभिनय भी हुआ है। मल्लिका को निक्षेप से ज्ञात होता है कि कालिदास का विवाह उज्जयिनी की राजकुमारी से हो गया है। मल्लिका कहती है कि कालिदास असाधारण है इसलिए उस विदुषी राज कन्या से उसका विवाह होना उचित ही है। निक्षेप इन सबका दोषी अपने-आपको मानता है क्योंकि उसी के कहने पर मल्लिका ने कालिदास को उज्जयिनी जाने पर विवश किया था आज उसी निर्णय की वजह से मल्लिका की यह स्थिति हो गई है। मल्लिका उसे समझाती है और कहती है कि उसके जीवन में केवल इतना अन्तर आया है कि पहले माँ काम करती थी अब उनके रोगी हो जाने पर वह काम करती है, किन्तु निक्षेप जानता है कि मल्लिका कालिदास के विरह से दु:खी है।

तभी बाहर घोड़ों के टापों की आवाज सुनाई देती है। निक्षेप झरोखे से झाँक कर देखता है तो उसे कालिदास की आकृति दिखाई देती है जो घोड़े पर सवार होकर पर्वत की चोटी की ओर गए हैं। वह उसका पता लगाने के लिए चला जाता है। निक्षेप के चले जाने के बाद राज्य की दो कला नेत्रियाँ वहाँ आती हैं। वे दोनों इस ग्राम का अध्ययन करने यहाँ आई हैं जिसने कालिदास जैसी विभूति को जन्म दिया है। रंगिण ी उज्जयिनी के नाट्य केन्द्र में नृत्य का अभ्यास करती है तथा संगिनी मृदंग और वीणा वादन सीखती है और प्रणय-गीत भी लिखती है। इन दोनों बालाओं को साधारण जगह और साधारण लोगों के सम्बन्ध में जानकर आश्चर्य होता है। दोनों बालाओं को मल्लिका से विशेष सहायता न मिलने के कारण वे लौट जाती हैं।

मल्लिका कालिदास की याद में खो जाती है तभी द्वार खटखटाने की आवाज आती है। मल्लिका द्वार खोलती है। द्वार पर अनुस्वार और अनुनासिक नामक दो राज्य कर्मचारी खड़े होते हैं जो कि कालिदास की पत्नी प्रियंगुमंजरी के आगमन की सूचना देने वहाँ आते हैं। वे मल्लिका को बताते हैं कि कालिदास का नाम अब आर्य मातृगुप्त हो गया है। वे अब काश्मीर का शासन संभालने जा रहे हैं। कुछ समय बाद मातुल के साथ प्रियंगुमंजरी प्रवेश करती है। वह मल्लिका के सौन्दर्य से प्रभावित होती है। मल्लिका उससे बैठने का आग्रह करती है तो वह कहती है—''मैं, तुम्हें और तुम्हारे घर को देखना चाहती हूँ। उन्होंने बहुत बार तुम्हारी और इस घर की चर्चा की है। वे जिन दिनों मेघदूत लिख रहे थे, उन दिनों प्राय: यहाँ का स्मरण किया करते थे। आज इस भूमि का आकर्षण ही हमें यहाँ ले आया है। मैं विशेष आग्रह से उन्हें यहाँ लाई हूँ। इसका एक कारण यह भी है कि मैं इस प्रदेश का कुछ वातावरण साथ ले जाना चाहती हूँ।'' प्रियंगुमंजरी मल्लिका के घर में रखे कुछ भोज पत्रों को देखती और पूछती है कि वे किसकी रचनाएँ हैं। मल्लिका के मुख से कालिदास का नाम सुनकर वह इन रचनाओं के प्राप्त होने का स्रोत जानना चाहती है।

मल्लिका से उत्तर प्राप्त कर प्रियंगुमंजरी कहती है—''मैं समझ सकती हूँ। मैं उनसे जान चुकी हूँ कि तुम शैशव से उनकी संगिनी रही हो। उनकी रचनाओं से तुम्हारा मोह होना स्वाभाविक है। वे भी जब-तब यहाँ के जीवन की चर्चा करते हुए आत्मविस्मृत हो जाते हैं। इसलिए राजनीतिक कार्यों से कई बार उनका मन उखड़ने लगता है।'' प्रियंगुमंजरी, मल्लिका के जर्जर हो रहे घर को फिर से बनवा देने की बात कहती है तथा उसका विवाह किसी राजपुरुष से कराने की बात कहती है। वह मल्लिका से अनुस्वार और अनुनासिक जैसे व्यक्तियों में से किसी एक को चुनने को कहती है। तब मल्लिका की माँ बीच में ही बोल उठती है—''यह भावना के स्तर पर जीती है।'' प्रियंगुमंजरी वहाँ से चली जाती है।

अम्बिका कालिदास पर व्यंग्य करती है और कहती है कि वह तुम्हारे प्रेम और भावनाओं की कीमत चुकाना चाहता है। तभी वहाँ विलोम आ जाता है। वह अपनी व्यंग्यभरी बातों से वातावरण को और भी बोझिल बना देता है। वह कालिदास का प्रसंग उठाता है—''आश्चर्य है कि कालिदास ने स्वयं यहाँ आना उचित नहीं समझा'' मल्लिका विलोम से ऐसे प्रसंग न छेड़ने का आग्रह करती है। तभी घोड़ों की टापें सुनाई देती हुई दूर चली जाती हैं। मल्लिका कालिदास के इस व्यवहार से दु:खी हो जाती है। विलोम को भी इस बात का दु:ख होता है कि कालिदास ने उसकी दोस्ती का भरोसा तोड़ दिया। मल्लिका के आग्रह पर विलोम वहाँ से चला जाता है। मल्लिका जोर-जोर से रोने लगती है। अम्बिका कालिदास के लिए उल्टा-सीधा कहती है तो मल्लिका माँ से विनती करती है कि वह कालिदास के लिए कुछ न कहे। माँ के पुकारने पर वह फफक-फफक कर रो उठती है। माँ उसे सांत्वना देती है। यहीं पर नाटक का द्वितीय अंक समाप्त हो जाता है।

तृतीय अंक-कालिदास के आगमन तक

लम्बी बीमारी के बाद अम्बिका का निधन हो जाता है। मल्लिका की दशा भी उत्तरोत्तर दीन-हीन हो जाती है। कालिदास की उपेक्षा देखकर वह निराश हो जाती है। प्रियंगुमंजरी द्वारा सहायतार्थ भेजी जाने वाली स्वर्ण मुद्राओं तथा वस्त्रों को वह लौटा देती है। वह घर चलाने के लिए विलोम को अपने घर में रख लेती है। विलोम और मल्लिका की एक पुत्री भी है। मातुल अब लंगड़ा हो जाता है और बैसाखी के सहारे चलता है। मातुल का स्वर सुनकर मल्लिका बाहर आती है। मातुल का रंग काला पड़ गया है और कपड़े फटे हुए हैं। अपनी इस स्थिति का दोषी वह राजप्रसाद को मानता है। वह मल्लिका को बताता है कि सम्राट का देहांत हो जाने के बाद काश्मीर में विद्रोही शक्तियाँ सिर उठा रहीं हैं। कालिदास ने काश्मीर छोड़ दिया है, उसने काशी जाकर संन्यास ले लिया है। इस खबर को सुनकर मल्लिका दु:खी हो जाती है।

परिस्थितिवश मल्लिका ने विलोम से विवाह कर लिया पर उसका मन आज भी कालिदास के प्रति समर्पित है। मल्लिका कालिदास की यादों में डूबी हुई है तभी अचानक बिजली चमकती है और बादल गरजने लगते हैं, तभी राजकीय वस्त्रों में किंतु क्षत-विक्षत अवस्था में कालिदास घर में प्रवेश करता है। मल्लिका उसे एकटक देखती रहती है। वह कालिदास को सामने देखकर इसे एक सपना समझती है। तब कालिदास उससे कहता है कि मैं बहुत दिनों की यात्रा करके यहाँ की सच्चाई जानने आया हूँ। कालिदास मल्लिका के घर की बदली हुई व्यवस्था की चर्चा करता है।

मल्लिका मातुल की कही हुई बात कालिदास से पूछती है कि तुमने काश्मीर छोड़ दिया है ? कालिदास कहता है—''हाँ, क्योंकि सत्ता और प्रभुता का मोह छूट गया है, आज मैं उस सब से मुक्त हूँ, जो वर्षों से मुझे कसकता रहा है। काश्मीर में लोग समझते हैं कि मैंने संन्यास ले लिया है, परंतु मैंने संन्यास नहीं लिया मैं केवल मातृगुप्त के कलेवर से मुक्त हुआ हूँ, जिससे पुन: कालिदास के कलेवर में जी सकूँ।

कालिदास मल्लिका को ये भरोसा दिलाने की कोशिश करता है कि वह मल्लिका से अभी भी उतना ही प्रेम करता है। वह कहता है कि मैंने सोचा था कि कभी मिलने पर तुम्हें बताऊँगा कि मैंने वहाँ के वातावरण से कुछ भी नहीं लिखा। जो भी लिखा उसमें तुम ही थीं, कुमार सम्भव की तपस्विनी उमा तुम हो, मेघदूत की विरहणी यक्षिणी तुम हो और यक्ष की पीड़ा मेरी पीड़ा है, मेरी शकुन्तला भी तुम थीं। मैंने जो भी लिखा है वह मेरे जीवन का इतिहास था।

मल्लिका ने उसे बताया कि कालिदास की सारी रचनाएँ व्यापारियों से मंगाकर पढ़ ली हैं। कालिदास पास में पड़े एक ग्रन्थ को उठाकर देखता है तो उसमें केवल कोरे पृष्ठ हैं। मल्लिका कहती है कि ये पन्ने अपने हाथों से तुम्हें भेंट करने के लिए उसने बनाए थे, पर तुम यहाँ आकर भी नहीं आए। कालिदास पन्नों को पलटता है और कहता है कि तुम चाहती थी कि मैं इन पन्नों पर एक महाकाव्य की रचना करूँ, परन्तु सच तो यही है कि तुमने अपनी आँखों से गिरने वाले आँसुओं से बहुत कुछ लिख दिया है। इन पर अनंत सर्गों के महाकाव्य की रचना हो चुकी है। वह एक बार फिर मल्लिका से आरम्भ से जीवन शुरू करने को कहता है। इतने में अंदर से बच्ची के रोने का स्वर आता है। मल्लिका कालिदास को बताती है कि 'यह मेरा वर्तमान है।'' वह बच्ची को लेने अंदर चली जाती है।

विलोम का प्रवेश

विलोम के पैर की चोट से दरवाजा अपने आप खुल जाता है और वह अंदर आ जाता है। विलोम और कालिदास एक दूसरे को पहचान लेते हैं। विलोम के कपड़े कीचड़ में सने है और वह शराब के नशे में है। मल्लिका बाहर आने लगती है पर विलोम को देखकर ठिठक जाती है। विलोम कालिदास की आलोचना करता है और अपने मित्र को भूल जाने का आरोप लगाता है। विलोम उन्हें सुनाते हुए कहता है—'विलोम अब तो इस घर में अयाचित अतिथि नहीं है। अब तो वह अधिकार से आता है। नहीं ? अब तो वह इस घर में कालिदास का स्वागत कर सकता है। नहीं ?.....'' विलोम कालिदास को अपमानित करने के उद्देश्य से कहता है कि—''उस की प्रेयसी अब उसकी बच्ची की माँ बन चुकी है। तुम बहुत देर से आए। कालिदास समय किसी की प्रतीक्षा नहीं करता .....।'' कालिदास उसे वहाँ से जाने को कहता है, तो विलोम व्यंग्य करता हुआ कहता है—''देखना मल्लिका, आतिथ्य में कोई कमी न रहे। जो अतिथि वर्षों में एक बार आया है, वह आगे जाने कभी आएगा या नहीं।''

बच्ची के रोने की आवाज सुनकर मल्लिका अन्दर उसे लेने चली जाती है। बादल गरजते हैं और वर्षा होने लगती है। कालिदास दु:खी मन से चुपचाप घर से निकल जाता है। मल्लिका बच्ची को लेकर बाहर आती है पर कालिदास को न पाकर तेजी से दौड़कर ड्योढ़ी के किवाड़ खोल देती है। वह बाहर जाना चाहती है पर बच्ची को अपनी बाहों में देखकर वहीं रूक जाती है। बिजली बार-बार चमकती है और मेघ गरजते हुए सुनाई देते हैं। यहीं पर नाटक समाप्त हो जाता है।

❑❑

गद्य संकलन
अध्याय-1
पुत्र-प्रेम

—प्रेमचंद

लेखक परिचय

मुंशी प्रेमचंद को हिन्दी साहित्य जगत में कथा-सम्राट के नाम से जाना जाता है उन्होंने हिन्दी साहित्य को एक दशा और दिशा प्रदान की। प्रेमचंद की दृष्टि समाज सापेक्ष थी। वे सामान्य जन की समस्याओं को गम्भीरता से समझते थे। उनकी कहानियों में ग्राम्य जीवन तथा संस्कृति की विशिष्ट छाप मिलती है। उनका मानना था कि भारत का विशाल जन-समूह गाँवों में निवास करता है। अत: उनके जीवन को समझकर उसे अभिव्यक्त करना आवश्यक है।

प्रेमचंद पहले धनपत राय के नाम से कहानियाँ लिखते थे, पर अंग्रेज सरकार के अवरोध के कारण पहले नबाव राय तथा बाद में प्रेमचंद के नाम से लिखना प्रारम्भ किया। प्रेमचंद पहले उर्दू भाषा में लिखा करते थे, वे बाद में हिन्दी के विशाल व व्यापक विषय-क्षेत्र से प्रभावित

होकर हिन्दी भाषा में लिखने लगे इसलिए प्रेमचंद के साहित्य में उर्दू मिश्रित हिन्दी का प्रयोग हुआ है जिसे प्राय: हिन्दुस्तानी कहा जाता है। वे साहित्य में उर्दू, फारसी, संस्कृत तथा अंग्रेजी भाषा में प्रचलित शब्दों के साथ-साथ देशज शब्दों का प्रयोग भी करते हैं। प्रेमचंद की भाषा-शैली मुहावरेदार तथा चित्रात्मक है।

रचनाएँ—मुशी प्रेमचंद बहुमुखी प्रतिभा के धनी थे। इन्होंने उपन्यास, कहानी, निबन्ध के क्षेत्र में अपने लेखन से हिन्दी साहित्य को समृद्ध किया। इनकी प्रमुख रचनाएँ इस प्रकार हैं—

कहानिया—प्रेमचंद ने लगभग 300 कहानियाँ लिखीं जो 'मानसरोवर' नाम से आठ भागों में संकलित हैं।

उपन्यास—सेवा सदन, निर्मला, रंगभूमि, कर्मभूमि, गबन, गोदान आदि।

नाटक—कर्बला, संग्राम, प्रेम की वेदी।

मुंशी प्रेमचंद की भाषा में उर्दू संस्कृत के शब्दों का प्रयोग देखने को मिलता है। जिसे प्राय: हिन्दुस्तानी कहा जाता है, इनकी भाषा व्यावहारिक है इसलिए वह सरल, सजीव और प्रवाहमयी बन गयी है—इनकी भाषा शैली चित्रात्मक व मुहावरेदार है।

कहानी का परिचय

मुंशी प्रेमचंद द्ववारा लिखित कहानी पुत्र-प्रेम एक सामाजिक व पारिवारिक कहानी है जिसने मानव मन की कमज़ोरियों को अभिव्यक्ति प्रदान की है। बाबू चैतन्यदास के छोटे बेटे शिवदास की तपेदिक जैसी जानलेवा बीमारी से मृत्यु हो जाती है। प्रस्तुत कहानी में एक पिता के अंतद्व न्द्व, संवेदना, तथा हृदय की पीड़ा का मार्मिक चित्रण हुआ है।

कहानी का सारांश

बाबू चैतन्यदास गाँव के एक प्रतिष्ठित परिवार से थे। उनके पास दो-तीन गाँवों की जमींदारी थी। पर वे बहुत सोच समझकर खर्च करते थे। फिजूल-खर्ची में उनका विश्वास नहीं था। उनके दो पुत्र थे। बड़े पुत्र का नाम प्रभुदास और छोटे पुत्र का नाम शिवदास था। चैतन्यदास बड़े पुत्र प्रभुदास से अधिक स्नेह रखते थे। उसे इंग्लैण्ड भेजकर बैरिस्टर बनाना चाहते थे।

किन्तु होनी को तो कुछ और ही मंजूर था। प्रभुदास को बी.ए. की परीक्षा के बाद से ज्वर आने लगा। तब डॉक्टर ने बताया कि उसे तपेदिक हो गया है, पर अभी संक्रमण फेफड़े तक नहीं गया है। यदि इसे अच्छे सेनेटोरियम में भेज दिया जाए तो ये तीन-चार माह में स्वस्थ हो सकते हैं, परंतु ये मानसिक परिश्रम नहीं कर सकेगे। यह सुनकर चैतन्यदास की आशाओं पर तुषारापात हो गया।

गर्मी बीत गई। बरसात के दिनों में प्रभुदास की हालत बिगड़ती गयी, प्रभुदास ने अपने स्वस्थ होने की चिंता छोड़ दी, वह जीवन से निराश हो गया, वह घर वालों की नजरों से बचकर औषधियों को जमीन पर गिरा देता। चिकित्सक ने उसे इटली के किसी अच्छे सेनेटोरियम में ले जाने की सलाह दी जिसका तीन हजार का खर्च था। वहाँ साल भर रहना होगा पर पूरी तरह ठीक हो जाए यह निश्चित तौर पर नहीं कहा जा सकता।

परिवार में प्रभुदास को इटली भेजने के प्रस्ताव पर वाद-विवाद होता था। चैतन्यदास की पत्नी बेटे को इटली भेजने के पक्ष में थी। पति हाथ तंग होने का बहाना बनाते रहे। वे मन ही मन सोचते कि-इटली में ऐसी कोई संजीवनी नहीं है जो तुरंत चमत्कार दिखाएगी। वह भावुकता में पड़कर धन नहीं लगाना चाहते थे।

छ: माह बाद शिवदास बी.ए. पास हो गया। चैतन्यदास ने बेटे को कानून पढ़ने के लिए इंग्लैण्ड भेज दिया। उसे बम्बई तक स्वयं पहुँचाने गए। वहाँ से लौटने के एक सप्ताह के बाद ही प्रभुदास की मृत्यु हो गयी।

चैतन्यदास मणिकर्णिका घाट पर अपने सम्बन्धियों के साथ बैठकर चिता की ज्वाला को देख रहे थे। उस समय वे बहुत दु:खी थे। सोच रहे थे कि यदि पुत्र को इलाज के लिए इटली ले जाता तो वह स्वस्थ हो जाता। तीन हजार के मोह में उन्होंने पुत्र को खो दिया। उन्हें ग्लानि, शोक व पश्चाताप हो रहा था। तभी उन्हें वहाँ मनुष्यों का समूह आता दिखाई दिया। वे सब ढोल बजाते, गाते, पुष्पों की वर्षा करते हुए चले आ रहे थे। घाट पर आकर वे चिता सजाने लगे।

चैतन्यदास ने युवक से पूछा तो उसने बताया कि यह हमारे दादाजी हैं। इनकी इच्छापूर्ति के लिए हम इन्हें मणिकर्णिका घाट लाए हैं। यहाँ आने में सैकड़ों खर्च हो गये पर बूढ़े पिता को मुक्ति तो मिल गई। धन और किसलिए होता है। उसने बताया कि तीन वर्ष तक इनका इलाज चला। चित्रकूट, हरिद्वार, प्रयाग सभी स्थानों में वैद्यों के पास ले गये, कोई कसर नहीं छोड़ी।

तभी युवक के साथी ने आकर कहा-नारायण लड़का दे तो ऐसा दे। इसने रुपयों को ठीकरे समझा। जमीन तक बेच दी, पर काल के सामने किसी की भी नहीं चलती। रुपया-पैसा तो फिर कमाऊँगा पर मन में मलाल नहीं रहेगा कि कोई कमी रह गई। मैं तो कहता हूँ कोई सारा घर द्वार ले ले पर दादा को एक बोल बुला दे।

बाबू चैतन्यदास सिर झुकाए ये बातें सुन रहे थे। उस युवक के एक-एक शब्द उनके दिल में तीर की तरह चुभता था। इस घटना का उनके हृदय पर यह प्रभाव पड़ा कि उन्होंने प्रभुदास की अंत्येष्टि पर सैकड़ों रुपये खर्च कर डाले। लगता है कि उनके दु:खी चित्त की शांति के लिए केवल यही उपाय बचा था।

❑❑

अध्याय-2
गौरी

(सुभद्रा कुमारी चौहान)

लेखिका परिचय

हिन्दी साहित्य लेखन में सुभद्रा कुमारी चौहान का नाम बड़ी ही प्रतिष्ठा से लिया जाता है। स्वतंत्रता संग्राम की सक्रिय सेनानी व राष्ट्रीय चेतना की अमर गायिका श्रीमती सुभद्रा कुमारी चौहान का जन्म 1904 ई. में जिला प्रयाग (उ.प्र.) के निहालपुर गाँव में हुआ। उनके पिता ठाकुर रामनाथ सिंह ऑवरसियर थे, वे भजन गायक और संगीत के प्रेमी थे। इसलिए सुभद्रा जी की रुचि भी बचपन से ही कविता लिखने में थी। पन्द्रह वर्ष की आयु में ही इनका विवाह ठाकुर लक्ष्मण सिंह से हो गया। उनके पति राजनीति में विशेष रुचि रखते थे। उन्हीं की प्रेरणा से तथा महात्मा गाँधी के असहयोग आन्दोलन से प्रभावित होकर सुभद्रा जी भी सक्रिय राजनीति में कूद पड़ीं। वे जन–जागृति उत्पन्न करने के लिए कवि–सम्मेलनों में वीर रस पूर्ण कविताएँ पढ़ा करती थीं। वे कई बार जेल भी गईं। सन् 1948 में नागपुर से जबलपुर आते हुए कार दुर्घटना में इनकी मृत्यु हो गयी और हिन्दी साहित्य एक दैदीप्यमान सितारे से वंचित हो गया।

रचनाएँ—इनकी रचनाओं में देश–प्रेम और सामाजिक कुरीतियों को बड़ी प्रमुखता से उभारा गया है। इनकी प्रकाशित काव्य कृतियों के नाम इस प्रकार हैं—मुकुल, त्रिधारा, झाँसी की रानी, नक्षत्र, तथा सभा का खेल।

कहानी संग्रह—बिखरे मोती, उन्मादिनी व सीधे–सादे चित्र आदि।

इनके काव्य संग्रह 'मुकुल' पर सन् 1931 ई. में तथा 'बिखरे मोती' पर सन् 1933 ई. में इन्हें साहित्य सम्मेलन प्रयाग द्वारा 'सेक्सरिया पुरस्कार' प्रदान किया गया।

सुभद्रा जी की 'झाँसी की रानी' नामक कविता के शब्द आज भी युवाओं में देश–भक्ति व वीरता के भाव जगाते हैं। सुभद्रा जी के काव्य में देश–प्रेम, सांस्कृतिक महत्त्व और पारिवारिक संबंधों के दर्शन होते हैं तथा उनकी कहानियों में भी संबंधों की प्रगाढ़ता को दर्शाया गया है।

भाषा शैली की दृष्टि से सुभद्रा जी की कहानियाँ अत्यन्त सीधी, सरल, स्पष्ट व कलात्मक हैं। कहानी लेखन में इन्होंने प्रेमचंद व यशपाल की परम्परा को आगे बढ़ाया है। उन्होंने तत्सम शब्दों के साथ–साथ देशज शब्दों का भी मिश्रित प्रयोग किया है। इसलिए इनकी लेखन शैली की प्रभावोत्पादकता जनसाधारण के हृदय को आन्दोलित करती है।

कहानी का परिचय

'गौरी' स्वतंत्रता आन्दोलन के समय की कहानी है। यह एक चरित्र प्रधान कहानी है, जिसमें सुभद्रा कुमारी चौहान ने भारतीय नारी के उदात्त चरित्र को अभिव्यक्त किया है। भारतीय नारी की कर्तव्यपरायणता, उसके त्याग का आदर्श चरित्र हमारे सामने प्रस्तुत किया गया है। 'गौरी' बाबू राधाकृष्ण की इकलौती संतान है जो उन्नीस वर्ष की सुन्दर कन्या है। उसके पिता उसके विवाह के लिए योग्य वर की तलाश में हैं। गौरी स्वतंत्रता सेनानी सीताराम जी की पत्नी बनना स्वीकार कर लेती है। इस प्रकार कहानी का अंत बहुत मार्मिक व आकर्षक है। जब स्वतंत्रता सेनानी सीताराम जी एक साल की जेल से छूटकर अपने घर आते हैं तो अपने बच्चों के साथ गौरी को देखते हैं। गौरी उनके चरण स्पर्श करके उन्हें अपना पति स्वीकार कर लेती है।

कहानी का सारांश

'गौरी' बाबू राधाकृष्ण तथा कुंती की एकमात्र कन्या थी। गौरी उन्नीस वर्ष की सुन्दर कन्या थी। उसके माता–पिता उसके विवाह हेतु योग्य वर की तलाश में थे। वे सीताराम को पसंद नहीं करते क्योंकि उसकी अवस्था 35-36 वर्ष की थी और उसके दो बच्चे भी थे। उसे अपने बच्चों की देखरेख के लिए माँ चाहिए थी। तभी तो राधाकृष्ण जी कहते हैं—

''बच्चों को संभालने के लिए वे विवाह करना चाहते हैं, नहीं तो शायद न करते, उनकी दूसरी शादी है, उनकी उमंगें, उत्साह सब ठंडा पड़ गया है। वे अपने बच्चों के लिए एक धाय चाहते हैं, पर मेरी लड़की की तो दूसरी शादी नहीं है और वे तो साफ़–साफ़ कहते हैं कि मैं बच्चों के लिए विवाह करना चाहता हूँ।''

सीताराम जी एक देश–भक्त तथा सरल–सीधे व्यक्ति हैं। राधाकृष्ण जी बताते हैं कि सीताराम जी अगले इतवार को गौरी को देखने आएँगे—इस बात का किसी को पता नहीं चलना चाहिए।

सीताराम जी अगले इतवार को अपने दोनों बच्चों के साथ पहुँच गए। बच्चे गौरी से घुल–मिल गए, उसे छोड़ना नहीं चाहते थे। बच्चों ने गौरी से पिता की शिकायतें की—''बाबू हमें खिलौने भी नहीं देते, और न मिठाई खिलाते हैं, हमें छोड़कर ऑफिस चले जाते हैं, दिन भर नहीं आते। बाबू अच्छे नहीं हैं।''

गौरी सीताराम जी के विचारों से प्रभावित हो गयी, उसने मन ही मन सीताराम जी को प्रणाम किया और बच्चों की ओर ममता भरी दृष्टि से देखा। राधाकृष्ण जी को सीताराम गौरी के योग्य वर नहीं लगा। अत: उन्होंने सीताराम जी को कहलवा भेजा कि जन्म-पत्री नहीं मिल रही है, जन्म-पत्री के बिना मिलाए विवाह नहीं हो पाएगा।

राधाकृष्ण जी को गौरी के लिए दूसरा वर मिल गया। गौरी के माता-पिता दोनों प्रसन्न थे, पर गौरी को रह-रहकर सीताराम जी के बच्चों का भोला-चेहरा व तथा उनकी मीठी-मीठी यादें आ रही थी तथा विनम्र व सादगी की मूर्ति सीताराम जी की याद आते ही गौरी का माथा उनके प्रति श्रद्धा से झुक जाता। गौरी देश-भक्त व त्यागी वीरों का बहुत सम्मान करती थी। वह (गौरी) नायब तहसीलदार से विवाह नहीं करना चाहती थी, पर लज्जावश नहीं कह पाती थी।

विवाह की तारीख से पंद्रह दिन पहले ही तहसीलदार साहब के पिता के देहान्त की खबर आती है, जिससे विवाह को एक साल के लिए टालना अनिवार्य हो गया। गौरी के माता-पिता बड़े दु:खी हुए लेकिन गौरी के सिर से चिन्ता का पहाड़ सा हट गया।

इसी बीच सत्याग्रह आन्दोलन की लहर पूरे देश में फैल गई। सीताराम जी को एक वर्ष का सपरिश्रम कारावास हो गया। इस समाचार को सुनकर गौरी चिंतित हो गयी और उसने अपनी माँ से कहा कि वह बच्चों की देख-रेख के लिए कानपुर जाना चाहती है। गौरी की माँ कुंती गौरी के स्वभाव से भली-भाँति परिचित थी, इसीलिए वह गौरी का विरोध नहीं कर सकी।

गौरी उसी दिन शाम को नौकर के साथ कानपुर चली गयी। साल भर बाद जब सीताराम जी घर लौटने लगे, तो बच्चों के बारे में सोचने लगे। एक ताँगे पर सवार होकर वे घर की ओर चले। उन्होंने बच्चों के लिए गरम जलेबियाँ लीं। दरवाजे पर पहुँचकर उनका हृदय धड़कने लगा कि बच्चे न जाने किस हालत में होंगे। वे दरवाजे पर पहुँचे। घर का दरवाजा खुला था, जैसे ही उन्होंने घर के भीतर कदम बढ़ाया, वहाँ गौरी को देखकर हैरान रह गए। गौरी ने झुककर उनकी पग-धूलि अपने माथे से लगा ली।

❑❑

अध्याय-3
शरणागत

(वृंदावन लाल वर्मा)

लेखक परिचय

वृन्दावन लाल वर्मा का जन्म 9 जनवरी, सन् 1889 मऊरानीपुर, झाँसी उत्तर प्रदेश में हुआ था। इनके पिता का नाम अयोध्या प्रसाद था। इन्होंने क्वीन विक्टोरिया कॉलेज ग्वालियर से स्नातक की उपाधि प्राप्त की तथा आगरा कॉलेज से एल.एल.बी. की उपाधि प्राप्त कर झाँसी में वकालत करने लगे। आगरा विश्वविद्यालय ने इन्हें डी.लिट. की मानद उपाधि से अलंकृत किया। 23 जनवरी, सन् 1969 को इनका निधन हो गया।

1909 में वृन्दावन लाल वर्मा जी का 'सेनापति ऊदल' नामक नाटक छपा जिसे ब्रिटिश सरकार ने जब्त कर लिया। 1920 तक ये छोटी कहानियाँ लिखते रहे। इन्होंने 1921 से निबन्ध लिखना प्रारम्भ किया।

रचनाएँ—वृन्दावन लाल वर्मा ने सन् 1927 में 'गढ़ कुण्डार' लिखा। इसी वर्ष 'संगम', 'लगन', 'प्रत्यागत', 'कुण्डली चक्र', 'प्रेम की भेंट', तथा हृदय की हिलोर भी लिखा सन् 1930 में 'विराट की पद्मिनी' लिखा तथा 1946 में प्रसिद्ध उपन्यास झाँसी की रानी लिखा। इसके बाद 'कचनार', 'मृगनयनी', टूटे काँटें', 'अहिल्याबाई', 'भुवन विक्रम', 'अचल मेरा कोई', आदि उपन्यास लिखे।

नाटक—हंसमयूर', पूर्व की ओर, ललित विक्रम, राखी की लाज आदि नाटकों के प्रणयन किए।

कहानी-संग्रह—शरणागत, दबे पाँव, 'कलाकार का दण्ड' आदि कहानी-संग्रह भी प्रकाशित हुए।

इन्हें इनकी साहित्यिक सेवाओं के लिए भारत सरकार, राज्य सरकार, उत्तर प्रदेश व मध्य प्रदेश राज्य के साहित्य पुरस्कार तथा पद्म विभूषण व सोवियत लैंड नेहरू पुरस्कार से सम्मानित किया गया।

भाषा-शैली—वृन्दावन लाल वर्मा की भाषा-शैली अत्यन्त सरल-सहज तथा प्रभावपूर्ण जिसमें तत्सम शब्दों का प्रयोग मिलता है।

कहानी का परिचय

वृन्दावन लाल वर्मा द्वारा लिखित कहानी 'शरणागत' एक शिक्षाप्रद सामाजिक कहानी है। इस कहानी में गाँव के एक ठाकुर की उदारता और शरणागत वत्सलता को चित्रित किया गया है। ठाकुर अपनी शरण में आए हुए कसाई रज्जब की गाँव के गुण्डों से रक्षा करता है।

कहानी का सारांश

रज्जब कसाई था। वह दो-तीन सौ रुपये की रकम लेकर अपनी बीमार पत्नी के साथ ललितपुर से लौट रहा था। रास्ता बीहड़ और सुनसान था, इसलिए उसने मड़पुरा नामक गाँव में रात बिताने का निश्चय किया। वह जानता था कि गाँव में कोई भी एक कसाई को आश्रय नहीं देगा, लेकिन फिर भी रज्जब ने गाँव के कई लोगों से रात भर के लिए स्थान देने की याचना की पर किसी ने भी उसे शरण न दी।

इसी गाँव में एक गरीब ठाकुर रहता था। उसके पास थोड़ी सी जमीन थी। गाँव वाले ठाकुर को 'राजा' कहकर पुकारते थे और उससे डरते भी थे। रज्जब अपनी पत्नी को साथ लेकर ठाकुर के द्वार पर शरण लेने पहुँचा। ठाकुर ने जब जाति पूछी तो, तो रज्जब का उत्तर सुनकर वह आग-बबूला हो गया। रज्जब के बहुत अनुनय-विनय करने पर ठाकुर नरम पड़ गया और उसने उन्हें रात भर के लिए अपने घर में शरण दे दी।

पति-पत्नी के सो जाने के बाद कुछ लोगों ने ठाकुर को इशारे से बुलाया और बताया कि एक कसाई रुपये की गठरी बाँधे इधर ही आया है, पर ठाकुर बोला कि ''वह कसाई का पैसा नहीं छुएगा''। उसने अपने साथियों को बाहर से ही टाल दिया।

सुबह होने पर रज्जब नहीं जा सका क्योंकि उसकी पत्नी के शरीर में बहुत दर्द था तथा वह एक कदम भी नहीं चल पा रही थी। ठाकुर ने क्रोधित होकर रज्जब को जाने के लिए कह दिया। रज्जब ने बहुत विनती की परन्तु ठाकुर नहीं माना। अन्त में उसने गाँव के बाहर एक पेड़ के नीचे शरण ली। रज्जब ने एक छोटी जाति वाले व्यक्ति को ललितपुर गाड़ी ले जाने के लिए तैयार कर लिया। पत्नी को तीव्र ज्वर आ जाने के कारण रज्जब को अपनी यात्रा स्थगित करनी पड़ी। डेढ़ घंटे बाद उसने गाड़ीवान से जल्दी चलने को कहा। पाँच-छः मील चलने के बाद संध्या हो गयी, फिर अँधेरा होने लगा। गाड़ी थोड़ी दूर और चली होगी कि किसी ने उन्हें रुकने के लिए कहा। रज्जब ने देखा कि चार-पाँच आदमी लट्ठ बाँधकर कहीं से आ गए हैं। वे रज्जब पर आक्रमण करने को तैयार थे उनमें से एक ने रज्जब के सिर पर लाठी मारी तो रज्जब ने विनती की कि—

''मैं बहुत गरीब आदमी हूँ। मेरे पास कुछ नहीं हैं। मेरी औरत गाड़ी में बीमार पड़ी है, मुझे जाने दीजिए।''

गाड़ीवान वहाँ से खिसकना चाहता था, पर दूसरे आदमी ने उसे पकड़ लिया उसके पूछने पर गाड़ीवान ने बता दिया कि जिसे वह लेकर जा रहा है, वह ललितपुर का कसाई है। यह सुनकर लाठी वाले आदमी ने अपने एक साथी के कान में कहा कि इसका नाम रज्जब है। लाठी वाले ने अपने साथी से कहा कि—इसे छोड़ो, चलो यहाँ से। पर वह न माना और बोला—''इसका खोपड़ा चकनाचूर कर दो। असाई-कसाई हम कुछ नहीं मानते''।

ठाकुर ने लठैत से कहा कि इसे तंग मत करो यह मेरी शरण में आया था। ठाकुर ने गाड़ीवान से कहा कि अपनी गाड़ी हाँके और रज्जब उसकी पत्नी को ठिकाने पर पहुँचाकर आ। नहीं तो तेरी खैर नहीं।

गाड़ीवान गाड़ी लेकर बढ़ गया। उन लोगों में से जिसने गाड़ी पर चढ़कर रज्जब के सिर पर लाठी तानी थी। उसने क्षुब्ध होकर कहा, 'दाऊ (ठाकुर)जी! आगे से कभी आपके साथ न आऊँगा' दाऊ जी ने उत्तर दिया—''न आना, मैं अकेले ही बहुत कर गुजरता हूँ परन्तु बुन्देला शरणागत के साथ घात नहीं करता। इस बात को गाँठ बाँध लेना।''

❑❑

अध्याय-4
सती

(शिवानी)

लेखिका परिचय

हिन्दी साहित्य जगत में शिवानी का नाम बड़े सम्मान से लिया जाता है। शिवानी का वास्तविक नाम गौरापंत था। इनका जन्म 17 अक्टूबर सन् 1923 ई. में गुजरात के राजकोट में हुआ। इनकी शिक्षा शांति निकेतन और कोलकाता विश्वविद्यालय में हुई। इनकी लिखी कहानियाँ बहुत लोकप्रिय रही हैं। और विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में छपती रहीं है।

21 मार्च, सन् 2003 ई. में 79 वर्ष की उम्र में इनका निधन हो गया।

बहुमुखी प्रतिभा की धनी शिवानी ने कहानियाँ, उपन्यास व संस्मरण लिखे हैं।

कथा संग्रह—'विष कन्या', 'लाल हवेली', 'करिए छिमा', 'पुष्पहार', 'चार दिन', 'अपराधिनी' व 'आपका बंटी' आदि।

उपन्यास—'कैजा', 'चौदह फेरे', 'कृष्ण कली', 'भैरवी, 'मायापुरी'।

भाषा शैली—इनकी भाषा-शैली सरल, सजीव तथा व्यावहारिक है जिसमें तत्सम, तद्भव तथा बोलचाल के शब्दों का प्रयोग किया गया है। इनकी रचनाओं में सामाजिक आडम्बर तथा रूढ़ियों पर करारा प्रहार किया गया है। इनकी साहित्यिक सेवा के लिए इन्हें 'पदम्श्री' की उपाधि से सम्मानित किया गया है।

कहानी का परिचय

शिवानी ने 'सती' शीर्षक नामक कहानी में मदालसा नाम की एक तेज तर्रार महिला के माध्यम से यह स्पष्ट किया है कि आज के युग में किसी को भी बातों के जाल में उलझाया जा सकता है, मूर्ख बनाया जा सकता है। मदालसा ने भी सती का ढोंग रचाकर तीन महिलाओं को न केवल मूर्ख बनाया, बल्कि उनका सामान लेकर भी चंपत हो गयी।

कहानी का सारांश

लेखिका (शिवानी) को प्रयाग स्टेशन से गाड़ी पकड़नी थी। स्टेशन पर तीर्थ-यात्रियों की भारी भीड़ थी। रिजर्वेशन स्लिप में ढूँढ़ने से उन्होंने पाया कि डिब्बे में तीनों सहयात्री महिलाएँ थीं। दो महिलाएँ आ चुकी थीं जिनमें एक महाराष्ट्रीयन और दूसरी पंजाबी थी। दोनों महिलाओं के पास काफी सामान था। पंजाबी महिला संभवत: किसी मीटिंग में भाग लेने जा रही थीं। उन्होंने सलवार, कमीज, दुपट्टा सभी खादी के पहन रखे थे। उनके चेहरे पर रौब था, लावण्य नहीं। उन्होंने अपने परिचय में बताया कि वे पंजाब के एक विस्थापित स्त्रियों के लिए बनाए गए आश्रम की संचालिका थीं। मराठी महिला ने अपना कोई परिचय नहीं दिया। उनके सामान पर लगे लेबल से पता चला कि वह मेजर जनरल बनोलकर की पत्नी थी।

गाड़ी के सीटी देते ही चौथी महिला ने डिब्बे में प्रवेश किया। उनके हाथ में बेंत की बनी एक छोटी टोकरी थी और काँख में चोकोर बटुआ। उनकी लम्बाई छ: फुट साढ़े दस इंच थी। चौथी महिला ने अपना परिचय देते हुए कहा कि 'उनका नाम मदालसा सिंघाड़िया है। वह कल ही प्रिटोरिया से भारत आयी हैं, अपने पति की मृत देह लेने।'

मदालसा की वेष-भूषा को देखकर नहीं लग रहा था कि वह विधवा है, उसने बताया कि—''असल में पिछले वर्ष एक पर्वतारोही दल के साथ मेरे पति भारत आए थे। वहीं एक एवलैंस (तूफान) के नीचे दबकर उनकी मृत्यु हो गई।''

भारत सरकार की सूचना पर वह भागती हुई आई है। वह भारत में सती होने के लिए आई है। तीनों महिलाएँ यह सुनकर स्तब्ध रह गईं। खादीधारी पंजाबी महिला उठकर मदालसा के सिरहाने बैठ गई और बोली—''नहीं, आपको ऐसी मूर्खता करने का कोई अधिकार नहीं है। यह एक अपराध है। क्या आप नहीं जानतीं?'' पंजाबी महिला ने मदालसा से कहा कि वह उसके साथ चलेगी। पति के अंतिम संस्कार के बाद उसे अपने आश्रम में ले जाएगी।

मदालसा अपने निश्चय पर अडिग रही और बोली-मेरी परनानी और नानी तथा माँ भी सती हुई थीं।

इसके बाद मदालसा ने सबसे खाना खाने के लिए कहा और स्वयं मुँह हाथ धोने गुसलखाने में चली गई। उसके वहाँ से जाते ही हम तीनों ने उसके सती होने के संबंध में बातचीत की। मराठी महिला ने उसे अजीब औरत कहा, क्योंकि मरने वाला ढिंढोरा पीटकर नहीं मरता। खादीधारी महिला का पूर्ण विश्वास था कि मदालसा अवश्य सती हो जाएगी। हमें पुलिस को खबर करनी चाहिए। तभी मदालसा हाथ-मुँह धोकर आ गई।

सबने अपने-अपने टिफिनदान निकाल लिए और सबने खाना खाया। खाना खाने के बाद मदालसा ने पानदान निकालते हुए कहा—

"यह मेरे नीलू ने मुझे बगदाद से लेकर भेंट किया था। उसे पान बेहद पसंद थे।" उसने खुद पान खाया और तीनों महिलाओं को भी खिलाया, फिर चारों महिलाओं में सती प्रथा पर भी बहस छिड़ गई। थोड़ी देर बार मदालसा बोली—'चलो जी, अब सो जाओ।'

तीनों महिलाएँ गहरी नींद में सो गईं और तरह-तरह के सपने देखने लगीं। जब सबकी आँख खुली तो देखा मदालसा गायब थी। वह अपने साथ सबका सामान ले गई थी। सुना है कुकुरमुत्तों को पीसकर बनाया गया विष खाकर भी गहरी नींद आती है। लेखिका को लगा कि वह विष अवश्य ही हमें खिलाया गया होगा। पंजाबी महिला बिलख रही थी कि उसके सूटकेस में आश्रम के दस हजार रुपये थे। मिसेज वनोलकर बोली कि उनके विवाह का जड़ाऊ सेट गायब है। लगता है सती की बच्ची हमें कोई विष खिला गई। सिर फटा जा रहा है।

चेन खींचकर गाड़ी रोकी गई। सती को पकड़वाने के लिए पुलिस को खबर की गई, पर वह आज तक नहीं मिली।

❑❑

अध्याय-5
आउटसाइडर

(मालती जोशी)

लेखिका परिचय

मालती जोशी का जन्म 4 जून, सन् 1934 को औरंगाबाद में हुआ था। मालती जोशी ने आगरा विश्वविद्यालय से सन् 1956 में हिन्दी विषय में एम. ए. की उपाधि प्राप्त की। आपने अनगिनत कहानियाँ, बाल-कथाएँ तथा उपन्यासों की रचना की है। इनमें से अनेक रचनाओं का विभिन्न भारतीय तथा विदेशी भाषाओं में अनुवाद भी किया जा चुका है।

महाराष्ट्रीयन परिवार में जन्म लेने के कारण इनकी मातृभाषा मराठी है, पर लेखन कार्य का श्रीगणेश हिन्दी भाषा में ही हुआ। इनकी साहित्यिक जीवन की शुरुआत गीतों से हुई, फिर कहानियों का जो दौर शुरू हुआ वो अब तक जारी है। इन्होंने कई कहानियों का नाट्य रूपांतर किया तथा इनकी कुछ कहानियों को दूरदर्शन पर भी मंचित किया गया है। इनकी लगभग अब तक 34 पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं। जिनमें दो मराठी कथा संग्रह, दो उपन्यास, पाँच बाल-कथाएँ, एक गीत संग्रह और शेष कथा-संग्रह सम्मिलित हैं।

कहानी संग्रह—'अपने आँगन की छाँव', 'परख', 'जीने की राह', 'दर्द का रिश्ता', तथा 'आनंदी' इनके प्रमुख कहानी संग्रह हैं।

भाषा-शैली—मालती जोशी की भाषा-शैली अत्यन्त रोचक, सरस तथा व्यावहारिक है। इनकी भाषा में बोल-चाल के शब्दों की प्रमुखता है।

मालती जोशी जी को हिन्दी और मराठी की विभिन्न साहित्यिक संस्थाओं द्वारा सम्मानित व पुरस्कृत किया जा चुका है। अहिन्दी भाषी कथा लेखिका के रूप में शिवसेवक तिवारी पदक, रचना पुरस्कार, कलकत्ता 1983, मराठी कथा संग्रह 'पाषाण' के लिए सन् 1984 में महाराष्ट्र शासन का पुरस्कार प्रदान किया गया।

इन्हें अक्षर आदित्य सम्मान, कला मंदिर, मधुवन गुरुवंदना सम्मान, तथा मध्य प्रदेश हिन्दी साहित्य सम्मेलन द्वारा वर्ष 1998 के भवभूति अलंकरण सम्मान से विभूषित किया जा चुका है।

कहानी का परिचय

'आउट साइडर' शीर्षक कहानी मालती जोशी द्वारा लिखित सामाजिक परिवेश पर आधारित एक कहानी है। उक्त कहानी में परिवार की सबसे बड़ी लड़की नीलम अपने पिता के आकस्मिक निधन के पश्चात् नौकरी कर तथा अविवाहित रहकर पूरे परिवार का भरण-पोषण करती है। कहानी का अन्त अत्यन्त मार्मिक है, क्योंकि परिवार का भरण-पोषण व उनके सम्पूर्ण उत्तरदायित्व का निर्वाह करने वाली लड़की को 'आउट साइडर' या 'फालतू सामान' कहकर सम्बोधित किया जाता है। जिसके कारण वह लड़की (नीलम) अपनी स्थिति एवं नियति पर निराश हो जाती है।

कहानी का सारांश

नीलम एक कॉलेज में अध्यापन का कार्य करती है। उसके तीन भाई हैं—सबसे बड़ा भाई सुजीत (जीतू), मंझला भाई सुदीप (दीपू) और सबसे छोटा भाई सुमित है। पूनम, नीलम की छोटी बहन है। पूनम के पति का नाम नरेश है। सुदीप कनाडा में नौकरी करता है, सुजीत बैंक में काम करता है और सुमित मेडिकल कर रहा है। परिवार में छोटे भाई सुमित का विवाह है। नीलम को ऐसा लगता है कि छोटे भाई की शादी के साथ ही उसकी सारी जिम्मेदारियाँ पूरी हो गईं, इसलिए नीलम स्वयं को बहुत हल्का तथा मुक्त महसूस करती है।

इस अवसर पर सब लोग नीलम के सामने उसके विवाह से संबंधित कई प्रकार के प्रौढ़तर व परिवार वाले वरों का प्रस्ताव पेश करते हैं। वे चाहते हैं कि नीलम भी आराम से अपनी जिंदगी बसर करे, पर नीलम विवाह के लिए राजी नहीं होती क्योंकि उसका मानना है कि घर बसाने की भी एक उम्र होती है। वह अब पैंतालीस वर्ष की है। अत: उसकी विवाह करने की उम्र अब निकल चुकी है।

तीनों भाई कमरे से बाहर निकले ही थे कि सुदीप की पत्नी सुषमा ने कहा कि उसे मालूम था कि वे मना कर देगी क्योंकि इतने दिनों तक वे इस घर में बॉसिंग करती रही है, अब ससुराल में धौंस-डपट सहना उनके बस की बात नहीं है। यह सुनकर नीलम को भी लगा कि इतने दिनों तक इस घर में एकछत्र शासन करने के बाद अब वह किसी का शासन स्वीकार नहीं कर पाएगी।

इस बात को चौबीस घंटे भी नहीं बीते कि पूनम ने नीलम को बताया कि आपके विवाह न करने के कारण सुजीत और उसकी पत्नी अलका के मन पर भार सा बना रहता है। अलका कहती है कि एक अनब्याही ननद का साया हमेशा मँडराने के कारण वे ठीक से जिंदगी का आनंद नहीं ले पाते। पूनम ने भी अपनी बहन को विवाह करने के लिए राज़ी करने की चेष्टा की, पर नीलम पर अपनी छोटी बहन पूनम की बातों का कोई प्रभाव नहीं पड़ा। अंत में पूनम ने नीलम से कहा—''दीदी, तुमने इस घर को लाख अपने खून से सींचा हो, पर यह घर तुम्हारा नहीं हो सकता तुम यहाँ हमेशा आउट साइडर ही रहोगी। अभी तुम्हारे पास नौकरी है, पर जब रिटायर हो जाओगी तो तुम्हारी हैसियत इस घर में एक फालतू सामान की तरह रह जाएगी, तब तुम्हें मेरी बात याद आएगी।'' नीलम को लगा जैसे माँ ने उससे पक्षपात किया। पिता की आकस्मिक मृत्यु के बाद उसने कभी नहीं सोचा था कि अब यही उसकी नियति होगी। उसके मन में भी एक आशा थी कि कल को जब उसके भाई किसी लायक हो जाएँगे, तो वह भी अपनी जिंदगी जी सकेगी।

नीलम ने अपने भाई की शादी के लिए पंद्रह दिन की छुट्टी ले रखी थी। नीलम चाहती थी कि अपनी छुट्टियाँ कुछ दिनों के लिए बढ़ा ले, जिससे ज्यादा से ज्यादा वक्त अपने भाई सुदीप के साथ बिता सके। वह कॉलेज जाते समय छुट्टी बढ़ाने का प्रार्थना-पत्र भी लेती गई। कॉलेज में प्रिंसीपल मैडम ने उसे बताया कि उसका ट्रांसफर-आर्डर आया है—ट्रांसफर और प्रमोशन एक साथ। उसे बहुत दूर बस्तर में प्रिंसीपल बनाकर भेजा जा रहा है। प्रिंसीपल बोली कि तुम्हें यह ऑफर स्वीकार कर लेना चाहिए क्योंकि अब तुम्हारी सब जवाबदारियाँ खत्म हो गई हैं।

घर आते समय नीलम ने सबके लिए खरीदारी की । घर पहुँच कर जब वह दीपू के कमरे की ओर गई तो भीतर देवरानी-जेठानी का प्रेमालाप चल रहा था—''क्या करें भई, हमने तो बहुत कोशिश की, पर वे टस से मस न हुई। अब यही समझ लो कि वे हमारी ननद नहीं सास हैं और उन्हें हमेशा हमारे साथ रहना है।'' यह सुनकर नीलम को सहसा अपने कानों पर विश्वास नहीं हुआ।

रात को खाने की मेज पर रसगुल्लों का एक बड़ा-सा डोंगा सजा हुआ था। नीलम ने कहा, 'यह मेरे प्रमोशन की मिठाई है। दूर बस्तर में प्रिंसीपल बनकर जा रही हूँ। बड़ी ही शांत जगह है। बार-बार प्रमोशन ठुकराना अच्छा नहीं लगता'। इस बात पर सभी एकमत थे।

रात में बिस्तर पर लेटी हुई नीलम सोच रही थी कि उसने अपनी प्रिंसीपल मैडम से कितने दर्द के साथ कहा था कि मेरे भाई मुझे इतनी दूर नहीं जाने देंगे, पर सच्चाई तो यह थी कि किसी ने भी प्रतिवाद नहीं किया। नीलम को ऐसा लग रहा था कि घर में उसकी हैसियत अभी से एक फालतू सामान की सी हो गई है।

❑❑

अध्याय-6
दासी

(जयशंकर प्रसाद)

लेखक परिचय

बहुमुखी प्रतिभा के धनी छायावादी कवि जयशंकर प्रसाद का जन्म काशी के एक प्रतिष्ठित वैश्य परिवार में सन् 1889ई० में हुआ। इनके पिता का नाम श्री देवी प्रसाद था, जो तम्बाकू के प्रसिद्ध व्यापारी थे। इनका परिवार सुंघनी साहू के नाम से विख्यात था। बचपन में ही इनके सिर से पिता का साया उठ गया। इनकी प्रारंभिक शिक्षा घर पर ही हुई। इन्होंने हिन्दी, अंग्रेज़ी, संस्कृत, उर्दू, फारसी, बंग्ला, आदि भाषाओं का गहन अध्ययन किया। इनके घर विद्वानों और कवियों का जमघट लगा रहता था। अत: बाल्यकाल से ही साहित्यकारों की संगति में रहने के कारण आपने कविता लिखना प्रारम्भ कर दिया। आरम्भ में ब्रज भाषा में कविताएँ लिखी पर बाद में खडी बोली में लिखने लगे। जीवन के अन्तिम क्षणों में क्षय रोग (टी०बी०) से पीड़ित होने के कारण 14 नवम्बर सन् 1937ई० में 48 वर्ष की अल्पआयु में इनका निधन हो गया।

जयशंकर प्रसाद बहुमुखी प्रतिभा के धनी थे इनकी **काव्य रचनाओं** में- प्रेम पथिक, 'कानन कुसुम', महाराणा का महत्त्व, लहर, झरना, आँसू, कामायनी प्रसिद्ध हैं।

नाटक—'चन्दगुप्त', 'स्कन्द गुप्त', 'अजातशत्रु', राज्यश्री', 'कामना', 'ध्रुवस्वामिनी' 'जन्मेजय का नाग यज्ञ'।

उपन्यास—कंकाल और इरावती।

एकांकी—'कल्याणी', 'सज्जन', 'परिणय', 'प्रायश्चित', 'एक घूँट'।

निबन्ध—'काव्य और कला'

कहानी संग्रह—'आकाशदीप', 'इन्द्रजाल', 'आँधी और छाया'। कामायनी काव्य ग्रंथ पर उन्हे' मंगला प्रसाद पारितोषिक' प्राप्त हुआ।

भाषा शैली—जयशंकर प्रसाद की भाषा सरल, संस्कृतनिष्ठ है जिसमें तत्सम् तद्भव शब्दों का प्रयोग है। इनकी भाषा भावानुकुल सरल है। इनके गद्य में भी काव्य जैसा आनन्द आता है।

कहानी का परिचय

'दासी' शीर्षक कहानी ऐतहासिक परिप्रेक्ष्य में लिखी गई है। कहानी में मानव हृदय के द्वंद्व एवं संवेदनाओं को अत्यन्त सूक्ष्मता एवं कुशलता से प्रभावशाली ढंग से उजागर किया गया है। कहानी में परिस्थितिवश मानव हृदय की सबलता और दुर्बलता, कर्तव्य और अकर्तव्य का सजीव चित्रण किया गया है। कहानी का अंत: अत्यन्त मार्मिक है।

कहानी का सारांश

बलराज एक वीर जाट था, जिसने तुर्क सुल्तान महमूद की ओर से जिहून के किनारे सिलजूको से युद्ध किया था। सुलतान ने सिलजूको से हारे हुए तुर्क और हिन्दू दोनों को ही नौकरी से निकाल दिया था। अब वह स्वयं को अपमानित व हताश अनुभव कर रहा था। और आत्महत्या करना चाहता था। तभी फिरोज़ा ने आकर उसे आत्महत्या करने से रोक दिया और बोली 'सुख जीने में है बलराज'!

बलराज इरावती से प्रेम करता है। वह उसकी वाग्दत्ता पत्नी है, लेखिका वह भी गरीब है। बलराज ने उससे कहा था कि वह लड़ाई पर जाएगा। और सुल्तान की लूट में जो सोने-चाँदी की ढेरी मिलेगी तो वह भी अमीर हो जाएगा और फिर उससे विवाह करेगा। फिरोज़ा उसे हिन्दुस्तान जाने की सलाह देती है और इरावती को ढूँढ़ने के लिए कहती है कि यदि कहीं इरावती मिल जाए तो उसके साथ गरीबी में ही किसी झोंपड़ी में दिन काट लेना। वह (फिरोज़ा) बलराज को पाँच दिरम देते हुए कहती है कि, ''लो ये पाँच दिरम, मुझे कल राजा साहब ने इनाम में दिए हैं। इन्हें लेते जाओ! देखो उससे जाकर भेंट करना।'' तभी वहाँ तिलक आ गया जिसने फिरोज़ा और बलराज की सारी बातें सुन ली थीं वह भी बलराज को हिन्दुस्तान जाने की सलाह देता है।

तिलक एक साधारण स्थिति से सुल्तान के सलाहकारों के पद तक पहुँचा था। उसने आकांक्षा रूपी नशे का पान कर लिया है। उसने बताया कि कुछ विद्रोही गुलाम अहमद नियाल्तगीन के पास लाहौर जाने वाले हैं। तुम भी उन्हीं के साथ चले जाओ। तिलक सुल्तान महमूद का सबसे विश्वसनीय कर्मचारी था। तिलक ने फिरोज़ा से भी पूछा कि क्या वह अहमद के पास हिन्दुस्तान जाना चाहती है? फिरोज़ा अहमद से प्यार करती थी। अहमद ने हिन्दुस्तान जाते समय राजा साहब से कहा था कि वह एक हजार सोने के सिक्के भेज देगा, तब तुम फिरोज़ा को छोड़ देना, यदि फिरोज़ा हिन्दुस्तान आना चाहे तो उसे भेज देना। अहमद ने सोने की दीनारें नहीं भेजीं फिर भी उसने फिरोज़ा से कहा कि ''फिरोज़ा तुम जा सकती हो, कुछ सोने के टुकड़ों के लिए मैं तुम्हारा हृदय नहीं कुचलना चाहता''। तिलक ने फिरोज़ा से कहा कि वह अहमद को समझाए कि वह अपनी सेना लेकर पंजाब के बाहर इधर-उधर हिन्दुस्तान में लूटपाट न किया करे। मैं कुछ ही दिनों में सुल्तान से कहकर उसे खजाने

और मालगुजारी का अधिकार दिला दूँगा। दरबार में इस पर गर्मा-गर्मी है कि अहमद की नीयत खराब है। कहीं ऐसा न हो कि सुल्तान मुझे ही काम के लिए भेजें। मैं हिन्दुस्तान नही जाना चाहता क्योंकि मैंने अपनी बहन (इरावती) के बारे में बरसों से यह जानने की चेष्टा भी न की कि वह जिंदा है या मर गई। अपनी आकांक्षा में मैं अपनी जन्मभूमि, हिन्दुस्तान तथा अपनी बहन इरावती को भुला बैठा। अब उसे हिन्दुस्तान जाना पड़ा तो वह अपनी बहन को क्या मुँह दिखाएगा। फिरोज़ा ने उत्तर दिया कि-वह हिन्दुस्तान जाएगी और इरावती को खोज निकालेगी। तिलक उसे गीत सुनाने को कहता है। फिरोज़ा उसे गीत सुनाती है।

बलराज इरावती को ढूँढते हुए मन्दिर पहुँचा। वहाँ उसने प्रार्थना की-''देवा मैंने जान बूझकर कोई पाप नहीं किया है...एक बार अपनी प्रेम प्रतिमा का दर्शन! कृपा करो, मुझे बचा लो।''

प्रार्थना करके बलराज ने जैसे ही सिर उठाया तो देखा एक स्त्री कौशैय वसन पहने हाथ में फूलों की सजी डाली लिए चली जा रही थी। बलराज ने उसे आलिंगन में लेना चाहा, पर इरावती ने उसे रोक दिया और कहा- ''बलराज तुम मेरी रक्षा नहीं कर सके, मैं आततायी के हाथ कलंकित की गई। फिर तुम मुझे पत्नी के रूप में कैसे ग्रहण करोगे?'' बलराज कहता है कि मेरे प्रेम की पवित्रता की अग्नि तुम्हारी पवित्रता को अब उज्जवल कर देगी।

इरावती ने कहा कि मैं अब तुम्हारे साथ नहीं जा सकती। आज में खरीदी हुई दासी हूँ, जिसे मलेच्छों ने काशी के एक महाजन को पाँच सौ रूपये में बेच दिया। नियम भी ऐसे कि मैं घर का कुत्सित से कुत्सित कार्य करूँगी। मेरे शरीर पर आजीवन उसका अधिकार रहेगा। इन सभी में मेरी स्वीकृति है। वह इस सत्य को कैसे तोड़ सकती है। इरावती की स्वामिनी देव-दर्शन के लिए आई थी, वह चली गई। बलराज पुनः एक बार इरावती को मिलने के लिए विकल हो उठा और जिस ओर इरावती गई थी उसी ओर वह भी चल पड़ा। इरावती को देखने के लिए बलराज कई दिनों तक रात-दिन धनदत्त के उपवन से नगर तक का चक्कर लगाता रहा। आज वह जीवन से हताश होकर काशी से प्रतिष्ठान जाने वाले पथ पर चलने लगा और निश्चय करता है कि वह काशी छोड़कर चला जाएगा। तभी वह घुड़सवारों से टकराता है। तभी किसी ने डाँटकर कहा-''देखकर नही चलता'' तभी उसने चौंक कर देखा कि अश्वारोही घोड़े को पकड़े चले आ रहे है। एक अश्वारोही ने उससे पूछा - 'बनारस कितनी दूर होगा''? बलराज ने उत्तर दिया ''मुझे नहीं मालूम'' उन्होंने कहा कि तुम अभी उधर से ही चले आ रहे हो और कहते हो नहीं मालूम। बलराज कहता है कि वह उनका नौकर नहीं है, तब नियाल्तगीन उसे पकड़ने का हुक्म देता है और वह बलराज को पहचान जाता है। बलराज और नियाल्तगीन बहुत समय तक साथ रह चुके थे। बलराज से नियाल्तगीन साथ चलने को कहता है। बलराज जाना नहीं चाहता परन्तु, जब उसे पता चला कि फिरोज़ा भी पड़ाव में है तो वह एक तुर्की घोड़े पर सवार हो गया।

वे सभी अब बनारस की गलियों में थे। फिरोज़ा कमख्वाब देख रही थी और नियाल्तगीन अपने लिए नग चुन रहा था। फिरोज़ा ने अपने लिए कपड़ों के थान छाँट लिए। जिसे देखकर दुकानदार ने कहा कि सिर्फ तंग करने आये हैं। कुछ लिया ही नहीं। उनकी बातों को सुनकर बलराज ने उन्हें डाँटा। जिससे दुकानदार क्रोधित होकर कहता है कि तू तो तुर्की गुलाम का दास है। जिससे सुनते ही नियाल्तगीन की तलवार उसके गले तक पहुँच गई। तभी युद्ध आरम्भ हो जाता है। नियाल्तगीन के साथी बहुमूल्य पदार्थो को लूटने लगते है। उसी समय बलराज को इरावती की आवाज सुनाई दी। वह लोगों को रोकता है। बलराज फिरोज़ा को बताता है कि यही इरावती है। यह सुनकर फिरोज़ा बलराज, नियाल्तगीन और इरावती को लेकर चली जाती है।

चन्द्रभागा के तट पर फिरोज़ा, इरावती से पूछती है कि क्या तुम बलराज से प्रेम करती हो? जिसके जबाब में इरावती कहती है कि मैं तो दासी हूँ। तुमने मेरे प्राण तो बचाये हैं, लेकिन हृदय नहीं बचा सकी। बलराज इरावती की इन बातों को सुनकर वहाँ से चला जाता है।

रावी नदी के किनारे अहमद नियाल्तगीन के महल में आज शयन कक्ष की सज्जा का भार फिरोज़ा का था। फिरोज़ा अन्ततः थककर इरावती को सहेजकर सो जाती है। थकान के कारण इरावती भी वहीं सो जाती है। जब अहमद ने इरावती के वेदना विमंडित सौन्दर्य को देखा तो अहमद की आँखों में पशुता नाच उठी, लेकिन ठीक समय पर फिरोज़ा आ जाती है और अहमद के इस कृत्य की निंदा करती है। वह जाने लगती है तो इरावती भी उसी के साथ चली जाती है।

बहुत दिनों के बाद चन्द्रभागा के तट पर आकर बलराज जाटों के बीच एक नई जान फूँक देता है। जाट विद्रोह करना प्रारम्भ कर देते हैं। फिरोज़ा के जाने के पश्चात् अहमद अपनी कोमल वृत्तियों को खो बैठता है। यह पता चलने पर कि गजनी की सेना लेकर तिलक भी आ रहा है। यह विचार करता है कि जाटों के मिल जाने से गजनी के हाथों से पंजाब लिया जा सकता है।

फिरोज़ा और इरावती घने जंगल में एक वृक्ष के नीचे लेटी थीं कि घोड़ों की टापों ने उन्हे चौंका दिया। वह जाटों का एक दल था। जिसका नेतृत्व बलराज कर रहा था। बलराज फिरोज़ा को उसकी सुरक्षा का वादा करता है। उसी समय वहाँ अहमद आ जाता है फिरोज़ा और इरावती को वहाँ देखकर चिल्लाकर बोला- ''पकड़ लो इन औरतों को''। उसी समय अहमद और बलराज के बीच युद्ध शुरू हो जाता है। उसी समय तुर्को की सेना राजा तिलक के साथ आ जाती है। उसके आने से युद्ध तो रुक जाता है लेकिन तब तक बलराज का भाला अहमद का सीना चीर देता है। बलराज भी घायल हो जाता है। अहमद के शव पर झुकी हुई फिरोज़ा रो रही थी। इरावती मूर्च्छित बलराज का सिर अपनी गोद में लिए हुए थी। तिलक इस दृश्य को देखकर विस्मित हो जाता है। बलराज और इरावती के संवाद से तिलक को यह पता चलता है कि यह इरावती ही उसकी बहन है। इस प्रकार तिलक वर्षों बाद अपनी बहन इरावती से मिलता है। बलराज चनाब प्रांत के जाटों का सरदार बन जाता है और इरावती वहाँ की रानी। वहीं फिरोज़ा के प्रेमी रूपी प्रसन्नता (अहमद) की समाधि बन गई है और फिरोज़ा उस समाधि की दासी बनकर, झाड़ू देती है, फूल चढ़ाती हैं और दीप जलाती है, वह उस समाधि की आजीवन दासी बनी रही।

❑❑

अध्याय-7
क्या निराश हुआ जाए ?

(हजारी प्रसाद द्विवेदी)

लेखक परिचय

आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी का जन्म 9 अगस्त, 1907 ई. में उत्तर प्रदेश के बलिया जिले के 'दुबे का छपरा' नामक गाँव में हुआ। इनकी आरम्भिक शिक्षा घर पर ही हुई। इनका परिवार ज्योतिष विद्या के लिए प्रसिद्ध था। इनके पिता पं. अनमोल द्विवेदी ने पुत्र को संस्कृत व ज्योतिष के अध्ययन की ओर प्रेरित किया। द्विवेदी जी के बचपन का नाम बैजनाथ द्विवेदी था। द्विवेदी जी की उच्च शिक्षा काशी हिन्दू विश्वविद्यालय से हुई, जहाँ से इन्हें ज्योतिषाचार्य की उपाधि प्राप्त की। इसके बाद सन् 1940 में शांति निकेतन में हिन्दी अध्यापक नियुक्त हुए, जहाँ इन्होंने रविन्द्रनाथ ठाकुर की संगति का लाभ उठाया और अपनी साहित्यिक प्रतिभा को विकसित करने का अवसर प्राप्त किया। बाद में द्विवेदी जी वहीं हिन्दी भवन के निदेशक बन गए। वे काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, पंजाब विश्वविद्यालय तथा चण्डीगढ़ में हिन्दी विभाग के प्रोफेसर एवं अध्यक्ष पद पर भी कार्यरत रहे।

द्विवेदी जी का व्यक्तित्व बड़ा प्रभावशाली और स्वभाव बड़ा ही सरल व उदार था। वे हिन्दी, अंग्रेजी, संस्कृत और बांग्ला भाषा के विद्वान रहे। लखनऊ विश्वविद्यालय ने उन्हें डी. लिट् की उपाधि देकर सम्मानित किया।

द्विवेदी जी भारत सरकार की हिन्दी सम्बन्धी अनेक योजनाओं से भी जुड़े रहे। उत्तर प्रदेश सरकार की हिन्दी ग्रन्थ अकादमी के काशी मण्डल के अध्यक्ष भी बने। सन् 1957 में भारत सरकार ने उन्हें पद्म भूषण की उपाधि से अलंकृत किया। अन्ततः 19 मई, 1979 में आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी का देहावसान हो गया।

रचनाएँ—द्विवेदी जी उच्च कोटि के आलोचक व निबन्धकार रहे हैं। बहुमुखी प्रतिभा के धनी द्विवेदी जी ने निबन्ध, आलोचना, उपन्यास आदि अनेक विधाओं में रचनाएँ की हैं। इनके निबन्धों में सरसता, गम्भीरता तथा विनोदप्रियता का समन्वय पाया जाता है। इनकी प्रमुख कृतियाँ इस प्रकार हैं—

निबन्ध—'विचार और वितर्क', 'अशोक के फूल', 'कुटज', 'विचार-प्रवाह', 'कल्पलता' आदि।

उपन्यास—'बाणभट्ट की आत्मकथा' तथा चारुचंद्र लेख, पुनर्नवा, 'अनामदास का पोथा' आदि।

आलोचना साहित्य—'सूर और उनका काव्य', 'कबीर', 'हिन्दी साहित्य की भूमिका', 'साहित्य-सहचर', 'हिन्दी साहित्य उद्भव और विकास' आदि।

भाषा-शैली—द्विवेदी जी की भाषा-शैली सुव्यवस्थित, प्राँजल, सुबोध तथा प्रवाहमय है। द्विवेदी जी की भाषा के तीन रूप हैं—

तत्सम् प्रधान, सरल तद्भव प्रधान तथा उर्दू-अंग्रेजी शब्द-युक्त व्यावहारिक। इन्होंने अपनी भाषा में मुहावरे और लोकोक्तियों का भी प्रयोग यत्र-तत्र किया है।

निबन्ध का परिचय

प्रस्तुत निबन्ध में आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी जी ने देश की वर्तमान स्थिति का चित्रण करने के साथ ही साथ यह स्पष्ट किया है कि यद्यपि आज जीवन के मूल्यों के प्रति आस्था डगमगाती जरूर दिखाई दे रही है फिर भी वर्तमान परिस्थितियों में भी निराश होने की आवश्यकता नहीं है, क्योंकि आज भी समाज में ईमानदारी, मनुष्यता, सेवा, सच्चाई और आध्यात्मिकता जैसे गुण दिखाई देते हैं तथा मानव एक-दूसरे के प्रति प्रेम, जीवन में आशा का संचार करता है। अतः हमें आशावान बने रहना चाहिए। लेखक ने अपने कथन के समर्थन में अपने साथ घटी दो घटनाओं की चर्चा भी की है।

निबन्ध का सारांश

'क्या निराश हुआ जाए'? आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी द्वारा लिखा गया एक विचारात्मक निबन्ध है, जिसमें द्विवेदी जी ने सामाजिक सम्बन्धों के प्रति विचार व्यक्त किए हैं।

लेखक कहते हैं कि समाचार-पत्रों में ठगी, डकैती, चोरी, तस्करी और भ्रष्टाचार के समाचारों को पढ़कर कभी-कभी मेरा मन बैठ जाता है। लगता है कि देश में अब कोई ईमानदार आदमी (व्यक्ति) रह ही नहीं गया है। आज कोई भी काम किया जाए लोग उसमें दोष खोजने लगते हैं तथा उस कार्य के गुणों को भुला दिया जाता है। हम हर किसी में दोष देखने लगे हैं, यह चिन्ता का विषय है।

लेखक यही सोचता है कि गांधी, तिलक, विवेकानंद और रामतीर्थ का भारतवर्ष मानों कहीं खो गया है। लेखक कहता है—"मेरा मन कहता है, ऐसा हो नहीं सकता, हमारे मनीषियों के सपनों का भारत है और रहेगा। ऊपर की सतह पर जितना भी कोलाहल और उथल-पुथल क्यों न दिखाई दे रही हो, नीचे शांत, अचंचल गाम्भीर्य में अब भी भारत महान है, अनुकरणीय है।"

यह सही है कि आज ईमानदारी से मेहनत करके जीविका चलाने वाले निरीह और भोले-भाले श्रमजीवी पिस रहे हैं। झूठे, फरेबी फल-फूल रहे हैं। ईमानदारी को मूर्खता का पर्याय समझा जा रहा है। ऐसी स्थिति में जीवन के महान मूल्यों के सन्दर्भ में लोगों का विश्वास अब डगमगाने लगा है।

लेखक के अनुसार यह परिस्थिति नई नहीं है, ऐसा माहौल पहले भी था। तुलसीदास जी ने भी अपने ग्रन्थ रामचरितमानस में इस समस्या को व्यक्त किया है। लेकिन उस समय धन के प्रति लोगों में इतना मोह नहीं था। आज धन संग्रह की प्रवृत्ति को बढ़ावा मिला है। लेखक कहता है कि उस समय तुलसीदास जी ने तथा उनके समकालीन अधिकांश लोगों ने भी जीवन के महान मूल्यों में भी आस्था नहीं छोड़ी थी। आज भी छोड़ने की ज़रूरत नहीं है।

भारतवर्ष ने भौतिक वस्तुओं के संग्रह को महत्त्व नहीं दिया है। लोभ, मोह, काम, क्रोध आदि बुराइयाँ व्यक्ति में पहले से ही विद्यमान रहती हैं पर अपने मन को उनके इशारे पर छोड़ देना निकृष्ट आचरण है। इसे संयम में बाँधकर रखने के लिए उपाय किये गये हैं। देश के हीन व दरिद्र व्यक्तियों की दशा सुधारने के लिए अनेक कानून बनाए गए हैं। यह लक्ष्य तो उत्तम है पर जिन्हें इस कार्य में लगना है उनका मन कभी-कभी अपवित्र हो जाता है और लक्ष्य का स्थान विकार ने ले लिया है। जो भी हो इससे पुराने आदर्श और उपयोगी दिखाई देने लगे हैं।

भारतवर्ष कानून को सदा से धर्म के रूप में देखता आया है, पर आज कानून और धर्म में अन्तर आ गया है, जिसके कारण धर्म का पालन करने वाले लोग भी अब कानून की कमज़ोरियों का लाभ उठाने से नहीं हिचकिचाते। भारत में आज भी धर्म को कानून से बड़ा माना जाता है। सेवा, ईमानदारी, सच्चाई और आध्यात्मिकता के मूल्य दब अवश्य गए हैं, परन्तु अब भी बने हुए हैं। आज भी मनुष्यों के बीच प्रेम तथा महिलाओं का सम्मान है। गलत, सही की समझ है। समाचार-पत्रों में भ्रष्टाचार के प्रति लोगों का आक्रोश यह साबित करता है कि लोग इन चीजों को गलत समझते हैं। लेखक का कहना है कि—"दोषों का पर्दाफाश करना बुरी बात नहीं है, लेकिन बुराई में रस लेना बुरी बात है"। सैकड़ों घटनाएँ ऐसी हैं जिन्हें उजागर करने से मन में अच्छाई के प्रति भावना जाग्रत होती है। लेखक बताता है कि—एक बार लेखक ने रेलवे स्टेशन पर टिकट लेते हुए गलती से दस की जगह सौ रुपये का नोट दिया और गाड़ी में बैठ गए। थोड़ी देर बाद टिकट बाबू आया और नब्बे रुपये हाथ में देकर बोला—

"यह बहुत बड़ी गलती हो गई थी। आपने भी नहीं देखा मैंने भी नहीं देखा"। यह कहना कि ईमानदारी लुप्त हो गयी है, यह अनेक बेईमानी की घटनाओं से अधिक शक्तिशाली है।

लेखक दूसरे प्रसंग में कहता है कि—"मैं अपनी पत्नी और तीन बच्चों के साथ जा रहा था, निर्धारित स्थान से पहले एक निर्जन स्थान पर बस ने जवाब दे दिया। रात के दस बज रहे थे। तब कंडक्टर साइकिल लेकर चलता बना। लोगों ने सोचा कहीं वही डकैतों को न भेज दे। बच्चे पानी माँग रहे थे। कुछ नौजवान ड्राइवर को मारने की योजना बना रहे थे। मैंने बड़ी मुश्किल से ड्राइवर को बचाया। उसी समय हमने देखा कि बस अड्डे से खाली बस लेकर कंडक्टर आ रहा है। आते ही उसने कहा—कि यह बस चलने लायक नहीं है इसीलिए वह नई बस लाया है। साथ ही वह लेखक के बच्चों के लिए दूध और पानी भी लाया था। अन्त में लोगों ने अपने व्यवहार के लिए ड्राइवर से माफ़ी माँगी।

इन उदाहरणों को देखकर यह नहीं कहा जा सकता कि मनुष्यता एकदम समाप्त हो गयी है। लेखक के अनुसार मैंने कितनी बार धोखा खाया है। लेकिन मुझे सिर्फ उसका हिसाब रखना हो तो मुश्किल हो जाएगा। लेकिन अच्छी बातों ने निराश मन को हिम्मत भी बँधाई है। रविन्द्रनाथ ठाकुर ने अपने एक प्रार्थना गीत में भगवान से प्रार्थना की है—"संसार में केवल नुकसान ही उठाना पड़े, धोखा ही खाना पड़े तो ऐसे अवसरों पर भी हे प्रभो! ऐसी शक्ति दो, कि मैं तुम्हारे ऊपर संदेह न करूँ।"

इस प्रकार आशा की ज्योति अब भी बुझी नहीं है। अब भी महान भारत को पाने की सम्भावना बनी हुई है, बनी रहेगी। इसीलिए मन को निराश होने की आवश्यकता नहीं है।

❑❑

अध्याय-8
भक्तिन

(महादेवी वर्मा)

लेखिका परिचय

भारत के साहित्य कोष में महादेवी वर्मा का नाम ध्रुव-तारे की भाँति प्रकाशमान है। आधुनिक हिन्दी की सर्वाधिक सशक्त कवयित्रियों में से एक होने के कारण उन्हें आधुनिक युग की मीरा के नाम से भी जाना जाता है। महादेवी वर्मा का जन्म 26 मार्च, 1907 ई. में उत्तर प्रदेश के फर्रुखाबाद में हुआ था। इनके परिवार में सात पीढ़ियों के बाद पुत्री का जन्म हुआ था। अत: बाबा बाबू बाँके बिहारी जी हर्ष से झूम उठे और

इन्हें घर की देवी-महादेवी मानते हुए इनका नाम महादेवी रखा गया। महादेवी वर्मा के पिता श्री गोविन्द प्रसाद वर्मा भागलपुर के एक कॉलेज में प्राध्यापक थे। इनकी माता का नाम हेमरानी देवी था।

इनकी आरम्भिक शिक्षा मिशन स्कूल इंदौर में हुई। 9 वर्ष की अल्पायु में ही इनका विवाह हो गया। उसी समय इनकी माँ का भी देहान्त हो गया। आप निरन्तर अध्ययन करती रहीं। इन्होंने प्रयाग विश्वविद्यालय से संस्कृत में एम. ए. किया तथा प्रयाग महिला विद्यापीठ में प्रधानाचार्य के पद पर प्रतिष्ठित हुईं। 11 सितम्बर, 1987 को इलाहाबाद में उनका देहान्त हो गया।

रचनाएँ

काव्य संग्रह—'नीहार', 'रश्मि', 'नीरजा', 'सांध्य गीत', 'यामा', 'दीपशिखा', 'सप्तपर्णा', 'संधिनी' आदि।

निबन्ध संग्रह—शृंखला की कड़ियाँ, क्षणदा, 'संकल्पिता' तथा 'भारतीय संस्कृति के स्वर' आदि।

रेखाचित्र—'अतीत के चलचित्र', 'स्मृति की रेखाएँ', 'पंथ के साथी' तथा 'मेरा परिवार'।

भाषा-शैली—महादेवी वर्मा की भाषा-शैली संस्कृतनिष्ठ, कोमलकांत पदावली से युक्त तथा प्रसाद गुण से पूर्ण है। ये किसी भी चित्र को शब्दों में प्रस्तुत करने के लिए तद्नुकूल भाषा का प्रयोग करती रही हैं।

महादेवी वर्मा को इनके उत्कृष्ट साहित्य सृजन हेतु सेक्सरिया पुरस्कार, 'मंगलाप्रसाद पारितोषिक' तथा ज्ञानपीठ पुरस्कार प्राप्त हुए हैं। भारत सरकार ने भी इन्हें 'पद्मभूषण' की उपाधि से सम्मानित किया।

पाठ का परिचय

'भक्तिन' महादेवी वर्मा का प्रसिद्ध संस्मरणात्मक रेखाचित्र है, जो कि उनकी रचना 'स्मृति की रेखाएँ' में संकलित है। इसमें महादेवी जी ने अपनी सेविका भक्तिन के अतीत और वर्तमान का परिचय देते हुए उसके व्यक्तित्व को चित्रित किया है। भक्तिन ग्रामीण परिवेश से आयी हुई एक ऐसी महिला है, जिसके जीवन की मर्मांतक पीड़ा तथा उसके जीवन के करुणापूर्ण प्रसंग सभी को विचलित कर देते हैं। भक्तिन अपने चरित्र व स्वभाव से सभी को अपना बना लेती है। इसकी चारित्रिक विशेषताएँ उसे सामान्य सेविकाओं से भिन्न करती हैं।

पाठ का सारांश

भक्तिन महादेवी वर्मा की सेविका है। उसके चरित्र को प्रस्तुत करने के लिए लेखिका ने सर्वप्रथम उसका शब्दों से चित्र खींचा है। भक्तिन छोटे कद और दुबले शरीर व दृढ़ संकल्पवाली समझदार महिला है। भक्तिन काफ़ी समय से लेखिका के साथ है, लेकिन जब भी कोई उससे यह प्रश्न पूछता है तो वह कुछ सोचकर कह देती है कि वह पचास बरस से हमारे साथ है। इस आधार पर मेरी (लेखिका की) उम्र पचहत्तर की और उसकी (भक्तिन की) सौ के पार हो जाती है लेकिन वह इसमें से थोड़ा भी कम नहीं करना चाहती है।

सेवाभाव में हनुमान जी से स्पर्धा करने वाली भक्तिन का असली नाम लक्ष्मी (लछमिन) है। जिसे वह किसी को बताना नहीं चाहती। जब वह नौकरी की खोज में आयी तभी उसने अपना नाम बताने के साथ यह भी प्रार्थना की कि इस नाम का उपयोग न करें। लेखिका ने उसकी कंठी माला देखकर उसे नया नाम दिया—'भक्तिन'। इस नाम को पाकर वह गद्गद हो उठी।

वह इलाहाबाद के नजदीक झूँसी गाँव के एक अहीर सूरमा की इकलौती बेटी है तथा विमाता की छत्रछाया में पली है। पिता ने पाँच वर्ष की उम्र में उसका विवाह हँडिया गाँव के एक सम्पन्न गोपालक से कर दिया और विमाता ने नौ वर्ष की होने पर उसका गौना कर अपने कर्तव्य की इतिश्री कर ली।

लछमिन पिता की लाड़ली थी पर विमाता ने ईर्ष्यावश व सम्पत्ति के लालच में उसे पिता की बीमारी का समाचार न भेजकर उसकी मृत्यु का समाचार भेजा। सास ने भी रोने पीटने के अपशगुन से बचने के लिए उसे कुछ न बताया और यह कहकर मायके भेज दिया कि वह बहुत दिनों से मायके नहीं गई है सो जाकर देख आ। वहाँ जाकर लछमिन को सब पता चलता है, जिससे वह बहुत दु:खी हो जाती है और उल्टे पैर ससुराल आकर सास और पति को खरी-खोटी सुनाकर अपने क्रोध को शान्त करती है।

जब उसने एक के बाद तीन कन्याओं को जन्म दिया तो वह सास और जेठानियों की उपेक्षा की पात्र बन गई। वह सभी पुत्रों की माँ बन चुकी थीं। उनके काले कलूटे लड़कों को खाने के लिए दूध मलाई मिलती वहीं दूसरी ओर भक्तिन की कन्याओं को काला गुड़ और मट्ठा मिलता।

उसके पति ने उस पर कभी अँगुली भी नहीं उठायी, जबकि उसकी जिठानियाँ बात-बात पर पति द्वारा पीटी-कूटी जातीं। वह इसी प्रेम के बल पर अलगौसी हो जाती है। वह काम भी खूब करती, परिश्रमी दम्पत्ति के परिश्रम से उनका विकास स्वाभाविक था। बड़ी लड़की का धूमधाम से विवाह करने के पश्चात् अपनी 29 (उनत्तीस) वर्षीय पत्नी को छोड़ कर भक्तिन के पति ने इस संसार से विदा ली।

भक्तिन के हरे-भरे खेत, गाय भैंस और फलों के पेड़ों को देखकर जेठ-जेठानियों के मुँह में पानी आ गया, लेकिन वह उनके बहकावे में नहीं आयी और उसने दूसरा विवाह नहीं किया। उसने सुई की नोक के बराबर जमीन देने की उदारता न दिखाई। छोटी लड़की के भी हाथ पीले कर दिये तथा पति के चुने हुए बड़े दामाद को घर जमाई बनाकर रखा।

भक्तिन के जीवन के तीसरे हिस्से में भी उसका दु:ख कम नहीं हुआ। उसकी बड़ी बेटी विधवा हो जाती है। उसका बड़ा जेठ अपने साले से उसकी (भक्तिन की) लड़की का विवाह कराना चाहता है जिसे माँ और बेटी दोनों अस्वीकार कर देती हैं। एक दिन माँ की अनुपस्थिति में

जेठ का साला बेटी की कोठरी में घुसकर अन्दर से किवाड़ बन्द कर लेता है। इस घटना पर पंचायत बैठती है और पंचायत ने तीतरबाज युवक की बात मानकर विवाह कराने का आदेश दिया। यह दामाद भक्तिन के लिए दु:खदायी था जो सिर्फ तीतर लड़ाता था। अब धीरे-धीरे उनकी हालत और खराब होती गयी। लगान तक देने में समस्या आने लगी। तब भक्तिन कमाई के विचार से शहर आ गई और लेखिका के घर में सेविका बन गई।

जीवन के चौथे हिस्से में 'भक्तिन' का सेविका का रूप प्रारम्भ हुआ। लेखिका ने उसकी वेश-भूषा देखकर शंका से पूछा कि वह खाना बनाना जानती है। तब उसने कहा था—"इसमें कौन सी बड़ी बात है, रोटी बनाना, दाल पकाना, साग-भाजी छोंकना जानती है।"

दूसरे दिन प्रात: सिर पर कई लोटे जल डालकर, लेखिका की धुली धोती पर पानी के छींटे डालकर उसे पहन लिया फिर सूर्य और पीपल का अभिनन्दन कर जप करने के बाद भक्तिन रसोई में जाकर कोयले से एक रेखा खींच देती है जिसके उस पार जाना मना था। भोजन बन जाने के उपरान्त भक्तिन ने प्रसन्नता से लेखिका के लिए थाली में चार चित्तीदार रोटी और थाली टेढ़ी करके दाल परोस दी। पूछने पर तरह-तरह के तर्क दिए। उसके व्याख्यान से प्रभावित होकर एक रोटी दाल से खाकर लेखिका यूनिवर्सिटी चली गई। इस तरह इस देहाती वृद्धा ने जीवन की सरलता के प्रति जाग्रत कर दिया। भक्तिन का स्वभाव ही ऐसा बन गया था कि वह दूसरों को अपने मन के अनुसार बना लेती है। इसीलिए लेखिका स्वयं देहाती बन गई पर उसे न बदल सकी।

भक्तिन में दुर्गुणों की कमी नहीं है। वह लेखिका के इधर-उधर पड़े पैसे भण्डार घर की किसी मटकी में डाल देती हे। पूछने पर कहती है—"यह उसका अपना घर है, पैसा, रुपया जो इधर-उधर पड़ा देखा, सम्भाल कर रख लिया। यह क्या चोरी है"। जब भक्तिन को सिर मुँड़ाने से मना किया तो उसका जवाब था कि यह शास्त्र में लिखा है।

लेखिका कहती है—"मेरी किसी पुस्तक के प्रकाशित होने पर प्रसन्नता की आभा वैसे ही उद्भाषित हो उठती है जैसे स्विच दबाने से बल्ब में छिपा आलोक।"

भक्तिन काम में व्यस्त लेखिका की भूख को शांत करने का कोई न कोई उपाय करती रहती है। वह कभी दही का शर्बत, कभी तुलसी की चाय वहीं देकर उन्हें भूख का कष्ट नहीं सहने देती। लेखिका कहीं भी जाने के लिए प्रस्तुत होती तो भक्तिन को छाया के समान साथ ही पाती।

लेखिका और भक्तिन के बीच सेवक-स्वामी का सम्बन्ध है, यह बताना कठिन है। भक्तिन को नौकर कहना भी ठीक नहीं है क्योंकि ऐसा कोई स्वामी नहीं हो सकता जो इच्छा होने पर भी सेवक को अपनी सेवा से न हटा सके और कोई सेवक नहीं, जो स्वामी के चले जाने का आदेश पाकर अवज्ञा से हँस दे।

भक्तिन के दामाद और बेटी उसे बुलाने आते हैं तब भी वह उनके साथ नहीं जाती; पैसा भेज देती है और कभी-कभी उन्हें देख भी आती है। जब युद्ध के कारण सब पलायन करने लगे तो भक्तिन लेखिका से गाँव चलने का अनुरोध करती है और सारी योजना बना देती है। भक्तिन के इस प्रस्ताव को रोकने के लिए जब लेखिका कहती है कि पैसे नहीं हैं तब वह अपने पैसों के बारे में बताती है।

लेखिका और भक्तिन के बीच एक अलग किस्म का सम्बन्ध हो गया था। लेखिका चाहकर भी उसे अपनी सेवा से नहीं हटा सकती थी। भक्तिन मेरे साहित्यिक बन्धुओं से भी परिचित है। सबका दु:ख उसे प्रभावित कर सकता है। भक्तिन के संस्कार ऐसे हैं कि वह कारागार से ऐसे डरती है, जैसे यमलोक से। लेखिका के जेल जाने की सम्भावना बता-बताकर लोग उसे चिढ़ाते रहते हैं। लेखिका सोचती है कि जब चिर विदा की घड़ी आएगी तब यह वृद्धा क्या करेगी और वह क्या करेगी? लेखिका उसे खोना नहीं चाहती।

❑❑

अध्याय-9
संस्कृति क्या है?

(रामधारी सिंह दिनकर)

लेखक का परिचय

श्री रामधारी सिंह 'दिनकर' का जन्म 30 सितम्बर, 1908 ई. में बिहार के मुंगेर जिले के सिमरिया गाँव में हुआ। इनके पिता का नाम रवि सिंह तथा इनकी माता का नाम मनरूप देवी था। जब ये दो वर्ष के थे तभी इनके पिता का देहावसान हो गया था। इनका लालन-पालन इनके बड़े भाई बसंत सिंह और माता की छत्रछाया में हुआ। आरम्भिक शिक्षा गाँव में पूरी करने के बाद इन्होंने मोकामा घाट स्थित रेलव हाई स्कूल से मैट्रिक की परीक्षा उत्तीर्ण की। मैट्रिक की परीक्षा में हिन्दी में सर्वाधिक अंक प्राप्त करके 'भूदेव' स्वर्ण पदक जीता। पटना विश्वविद्यालय से बी. ए. की परीक्षा उत्तीर्ण करने के बाद वे एक विद्यालय में अध्यापक हो गये। बाद में मुज़फ्फरपुर कॉलेज में हिन्दी के विभागाध्यक्ष रहे तथा भागलपुर विश्वविद्यालय के उप कुलपति के पद पर कार्य किया। 24 अप्रैल, 1974 ई. को मद्रास (चेन्नई) में इनका निधन हो गया।

रचनाएँ—दिनकर छायावादोत्तर कवियों की पहली पीढ़ी के कवि थे। एक ओर उनकी कविताओं में ओज, विद्रोह, आकाश व क्रांति की पुकार है तो वहीं दूसरी ओर कोमल शृंगारिक भावनाओं की अभिव्यक्ति है। इनकी प्रमुख रचनाएँ इस प्रकार हैं—

कविताएँ—'रेणुका', 'हुंकार', 'कुरुक्षेत्र', 'उर्वशी', 'रश्मिरथी' आदि।

काव्य संग्रह—रसवंती, सामधेनी, नील कुसुम, सीपी और शंख, परशुराम की प्रतिज्ञा आदि।

गद्य साहित्य—'मिट्टी की ओर', 'अर्द्ध नारीश्वर', 'उजली आग', 'बेनी के फूल', हमारी सांस्कृतिक एकता प्रसिद्ध है।

भाषा-शैली—रामधारी सिंह 'दिनकर' की रचनाओं में सामाजिक जीवन एवं राष्ट्रीय समस्याओं का समावेश है। इन्होंने शुद्ध खड़ी बोली का प्रयोग किया है तथा साथ ही उसमें तत्सम् शब्दों का भी खुलकर प्रयोग किया है। उन्हें 'पद्म विभूषण' की उपाधि से अलंकृत किया गया तथा उनकी पुस्तक 'संस्कृति के चार अध्याय' के लिए उन्हें साहित्य अकादमी पुरस्कार मिला। उन्हें द्विवेदी पदक और ज्ञानपीठ पुरस्कार भी प्राप्त हुए। दिनकर जी अपनी लेखनी के माध्यम से सदा अमर रहेंगे।

निबन्ध का परिचय

'संस्कृति क्या है?' नामक निबन्ध में रामधारी सिंह दिनकर ने 'संस्कृति' की प्रमुख विशेषताओं और लक्षणों पर प्रकाश डालते हुए सभ्यता और संस्कृति में अन्तर समझाने का प्रयास किया है। प्रत्येक सुसभ्य आदमी को सुसंस्कृत नहीं कहा जा सकता। इसी तरह यह भी नहीं कहा जा सकता है कि हर सुसंकृत आदमी सभ्य होता है क्योंकि सभ्यता की पहचान सुख-सुविधाओं और ठाट-बाट से है जबकि निर्धन व्यक्ति गुणों से सम्पन्न होता है और वह भी सुसंस्कृत कहलाता है। जैसे—जंगलों में रहने वाले हमारे ऋषि-मुनि।

निबंध का सारांश

लेखक रामधारी सिंह दिनकर ने संस्कृति की प्रमुख विशेषताओं और लक्षणों पर प्रकाश डालते हुए कहा है कि संस्कृति ऐसी चीज़ है जिसे जान तो सकते हैं, पर उसे परिभाषित नहीं कर सकते। जो चीज़ हमारे पास है, वह है—सभ्यता और संस्कृति। सभ्यता वस्तुओं से है और संस्कृति हमारे भीतर व्याप्त है। इस प्रकार यह नहीं कहा जा सकता कि हर सुसभ्य व्यक्ति सुसंस्कृत ही होगा। ऐसा इसलिए नहीं कहा जा सकता क्योंकि यह आवश्यक नहीं है कि अच्छी पोशाक वाला आदमी स्वभाव से ठीक नहीं है तो वह संस्कृति के खिलाफ़ है। सभ्यता की पहचान ठाट-बाट है। यदि बहुत से ऐसे लोग जो झोंपड़ी में रहते हैं तथा अच्छे कपड़े नहीं पहनते, लेकिन उनमें विनम्रता, सदाचार आदि गुण हैं तो ऐसे लोगों को हम सभ्य तो नहीं कह सकते, पर उन्हें सुसंस्कृत समझने में कोई परहेज नहीं करना चाहिए।

छोटा नागपुर के आदिवासी लोग सभ्य नहीं कहे जा सकते हैं पर उनमें दया, माया, सच्चाई व सदाचार जैसे गुण हैं। प्राचीन भारत के ऋषिगण भी तो जंगलों में ही रहते थे। मिट्टी के बर्तनों में खाना, जीवों से प्यार करना यही उनका जीवन था। ऐसे ऋषियों ने ही संस्कृति का निर्माण किया। संस्कृति और सभ्यता के भेद को न समझ पाने के कारण ही कठिनाइयाँ हैं। इनकी प्रगति एक साथ होती है। उदाहरण के रूप में—जब हम कोई घर बनाते हैं तो यह सभ्यता का कार्य है, पर घर कैसा बनेगा? यह निर्णय लेना सांस्कृतिक रुचि पर निर्भर करता है। इस प्रकार संस्कृति सभ्यता का अंग बन जाती है।

संस्कृति और प्रकृति में भी भेद है। ईर्ष्या, मोह, लोभ, दोष, राग, और कामवासना आदि प्राकृतिक गुण हैं। मनुष्य यदि इन दुर्गुणों पर रोक लगाता है तो वह उतना ही संस्कृतिवान समझा जाता है। संस्कृति सभ्यता की अपेक्षा बहुत बारीक चीज़ होती है। सभ्यता के भीतर संस्कृति दूध में मक्खन और फूल में सुगन्ध की भाँति विद्यमान रहती है। सभ्यता के उपकरणों को शीघ्रता से एकत्रित किया जा सकता है पर संस्कृति ऐसी नहीं है। कोई व्यक्ति धनी तो तुरन्त हो सकता है लेकिन धनी व्यक्ति ऊँचे पद वाली संस्कृति उतनी जल्दी नहीं सीख सकता।

संस्कृति की रचना में शताब्दियाँ लग जाती हैं अनेक शताब्दियों तक एक समाज के लोग जिस तरह खाते-पीते रहते, सोच-विचार करते या धर्म-कर्म करते हैं, उन सभी कार्यों से उनकी संस्कृति उत्पन्न होती है। हमारे प्रत्येक कार्य में संस्कृति की झलक होती है। सच्चाई तो यह है कि संस्कृति जीवन जीने का एक तरीका है। जिस समाज में हमारा जन्म होता है, हम रहते हैं, उसी की संस्कृति हमारी संस्कृति है। लेखक संस्कृति के विषय में कहते हैं—"असल में, संस्कृति जिन्दगी का एक तरीका है और यह तरीका सदियों से जमा होकर उस समाज में छाया रहता है जिसमें हम जन्म लेते हैं।"

हम अपने जीवन में कुछ और संस्कार जमा करते हैं वह भी हमारी संस्कृति का अंग बन जाता है और मरणोपरान्त हम अन्य वस्तुओं के साथ संस्कृति की विरासत भी अपनी सन्तानों के लिए छोड़ जाते हैं।

आदिकाल से ही कवि, दार्शनिक, कलाकार, मूर्तिकार आदि हमारी संस्कृति के रचयिता हैं। पूजा-पाठ, घर-बरतन, शादी-श्राद्ध कर्म आदि जो करते आये हैं वही संस्कृति का अंश है। संस्कृति आदान प्रदान से बढ़ती है। संसार में शायद ही कोई ऐसा देश हो, जो यह दावा कर सके कि उस पर किसी अन्य देश की संस्कृति का प्रभाव नहीं पड़ा है।

जो संस्कृति अन्य संस्कृतियों से उनके गुणों को लेने के लिए खुली होती है, उस संस्कृति का कभी नाश नहीं होता है। लेखक का कहना है कि—

"जिस जलाशय के पानी लाने वाले दरवाजे खुले रहते हैं उसकी संस्कृति कभी नहीं सूखती उसमें सदा ही स्वच्छ जल लहराता रहता है और कमल के फूल खिलते हैं। कूप मंडूकता और दुनिया से रूठकर अलग बैठने का भाव संस्कृति को ले डूबता है।"

मुसलमानों के आगमन ने इस देश को उर्दू भाषा व कलम चित्रकारी दी। यूरोप के प्रभाव से भारत ने विज्ञान के प्रति अपनी सोच बदली। संस्कृति के प्रभाव ने ही राजा राममोहन राय, दयानन्द सरस्वती, रामकृष्ण परमहंस, विवेकानन्द और गाँधी को जन्म दिया।

सांस्कृतिक सम्पर्क का प्रभाव दर्शन और विचारों पर भी पड़ता है। इस आदान-प्रदान के कारण ही एक जाति का धार्मिक रिवाज, दूसरी जाति का रिवाज बन जाता है। एक देश की आदत दूसरे देश के लोगों की आदत में समा जाती है। भारत सांस्कृतिक दृष्टि से महान है, क्योंकि यहाँ की सामाजिक संस्कृति में अधिक जातियों की संस्कृतियाँ समायी हुई हैं।

❑❑

अध्याय-10
मजबूरी

(मन्नू भंडारी)

लेखिका परिचय

मन्नू भंडारी का जन्म 3 अप्रैल, 1931 को मध्य प्रदेश में मंदसौर जिले के भानपुरा गाँव में हुआ था। मन्नू भंडारी के बचपन का नाम महेन्द्र कुमारी था। लेखन के लिए उन्होंने मन्नू नाम का चुनाव किया था। इनकी प्रारम्भिक शिक्षा अजमेर में हुई। इन्होंने काशी विश्वविद्यालय से एम. ए. किया। कुछ समय तक कोलकाता में अध्यापन कार्य के पश्चात् दिल्ली विश्वविद्यालय के मिंराडा हाउस में अध्यापिका नियुक्त हुईं। धर्मयुग में धारावाहिक रूप से प्रकाशित उपन्यास 'आपका बंटी' से लोकप्रियता प्राप्त करने वाली मन्नू भंडारी विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन में प्रेमचन्द सृजनपीठ की अध्यक्षा भी रहीं। लेखन की कला उन्हें विरासत में मिली थी क्योंकि उनके पिता सुख संपतराय भी जाने माने लेखक थे।

रचनाएँ—मन्नू भंडारी की रचनाओं में पारिवारिक जीवन तथा समाज के विभिन्न वर्गों में जीवन की विसंगतियों का चित्रण मिलता है तथा नारी पात्रों को प्रमुखता से स्थान मिलता है। इनकी कहानियों में प्राचीन मान्यताएँ, अंधविश्वास, रूढ़ियों, परम्पराओं तथा मानवीय संवेदनाओं को उभारा गया है। इनकी प्रमुख रचनाएँ इस प्रकार हैं—

कहानी संग्रह—'एक प्लेट सैलाब' (1962), 'मैं हार गई' (1957), 'तीन निगाहों की एक तस्वीर' (1966), 'त्रिशंकु' और 'आँखों देखा झूठ' उनके प्रमुख कहानी संग्रह हैं।

उपन्यास—'आपका बंटी' (1971), 'एक इंच मुस्कान' (1962), तथा 'महाभोज' (1979) इनके प्रमुख उपन्यास हैं।

नाटक—'बिना दीवारों का घर' (1966) आपका प्रमुख नाटक है।

भाषा-शैली—मन्नू भंडारी की भाषा संस्कृतनिष्ठ, मुहावरेदार हिन्दी है, जिसमें तत्सम शब्दों की बहुलता है, पर भाषा बोझिल नहीं हो पायी है।

यत्र-तत्र मुहावरों और उर्दू-फारसी भाषा के प्रचलित शब्दों का प्रयोग किया है। इनकी साहित्यिक उपलब्धियों के लिए इन्हें हिन्दी अकादमी दिल्ली का 'शिखर सम्मान' राजस्थान संगीत नाटक अकादमी का 'व्यास सम्मान' तथा उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान द्वारा पुरस्कृत किया गया है।

कहानी का परिचय

प्रस्तुत कहानी मजबूरी में मन्नू भंडारी ने एक बूढ़ी अम्मा के पुत्र एवं पौत्र प्रेम तथा उसके मन के उतार-चढ़ाव, उथल-पुथल एवं द्वन्द्व का अत्यन्त कारुणिक एवं हृदयस्पर्शी चित्रण किया है। अपने पौत्र को अपने पास रखने तथा मजबूरी में स्वयं से अलग करने का घटनाक्रम पाठक को विचलित कर देता है।

कहानी का सारांश

बूढ़ी अम्मा जोर-जोर से लोरी गा-गाकर लाल मिट्टी से अपना कमरा लीप रही हैं, तभी बर्तन मलने के लिए आई नर्बदा उन्हें देखकर हैरान होकर कहती है—"अम्मा यह क्या हो रहा है? कल तो गठिया में जुड़ी पड़ी थीं ..... और आज ऐसी सर्दी में आँगन लीपने बैठ गईं।" नर्बदा को देखकर अम्मा का हाथ एक क्षण के लिए रुका, फिर बोली—"अरी नर्बदा, मेरा बेटू आ रहा है कल।" वह रात में एक बार मेरी गोद में ज़रूर सोएगा, पर इस बार मैं कह दूँगी, मैं तुझे गोदी में नहीं लूँगी। अब गोदी में सोएगा कि बेटू। बेटू उनका पौत्र है।

बूढ़ी अम्मा को अपने पुत्र रामेश्वर की बचपन की बातें याद आने लगीं। रामेश्वर तो बिना लोरी सुने सोता ही नहीं था। बेटू भी जरूर उसी पर गया होगा। पहले जब बहू बेटू को लेकर आयी थी तो वो दो महीने का था, अब तो सारा घर नापता फिरेगा, यह सोचकर वह रोमांचित हो उठीं।

बूढ़ी अम्मा ने काम समाप्त कर उठने का प्रयास किया मगर उठ न पाईं। वे नर्बदा से बोलीं—"अरे नर्बदा, मुझे जरा उठा दे री, घुटने तो जैसे फिर जुड़ गए।" नर्बदा ने अम्मा से कहा, जब तुम इतनी सर्दी में मिट्टी में सनी बैठी हो तो घुटने तो जुड़ेंगे ही। नर्बदा ने चुटकी लेते हुए कहा—"रामेश्वर तीन बरस बाद आ रहा है। मैं तो कहती हूँ, उसमें माया मोह नहीं है। तुम यू हीं मरी जाती हो उसके पीछे।" यह सुनकर बूढ़ी

अम्मा चुप न रह सकीं, बोली—"क्या करें, नौकरी तो आखिर नौकरी है। मेरे पास आज लाखों का धन होता तो बेटे को नौकरी करने परदेश नहीं दुरा देती, पर .....।" उनकी आँखें डबडबा आईं।

अम्मा ने नर्बदा से कहा कि दूध वाले को कल जल्दी दूध देने को कहना और नर्बदा को भी चौका बर्तन करने के लिए वहीं रहने को कहा।

बूढ़ी अम्मा रामेश्वर के बारे में तरह-तरह की बातें सोचने लगीं। तभी एक ताँगा अम्मा के घर के सामने आकर रुका। अम्मा दरवाजे की ओर दौड़ पड़ी। रामेश्वर की गोद से उन्होंने झटपट बच्चे को ऐसे छीना मानो किसी चोर उचक्के से वे अपने बच्चे को छीन रही हों, उसे कसकर अपने सीने से चिपका लिया।

चाय-पानी के बाद जब रामेश्वर नहाने चला गया तो अम्मा ने बहू से कहा—"खबर तो दी होती, बहू कि तुम्हारे बच्चा होने वाला है।"

बहू ने झेंपते हुए कहा—"यह भी कोई लिखने की बात थी, अम्मा।"

बहू ने अम्मा से कहा कि इस बार बेटू उन्हीं के साथ रहेगा, तो वह (अम्मा) आँखें फाड़-फाड़ कर देखने लगी और खुशी में बहू को दुआएँ देने लगीं।

अम्मा ने रामेश्वर को भी बताया कि बहू ने कह दिया है, "अब बेटू मेरे पास रहेगा। तू कहीं टाल मत जाना।"

अम्मा ने यह बात अपने वैद्यराज पति को भी घर आते ही बताई। बाद में जो भी घर आता अम्मा ने यह खबर सभी को सुनाई। अम्मा का सारा दिन बेटू को खिलाने और उसकी नौन राई करने में ही बीतता। वे सारा दिन बेटू को लादे फिरतीं, उसके साथ खेलतीं जैसे उनका बचपन लौट आया हो।

बीस दिन बाद जब बहू अपनी माँ के घर गई तो बेटू ने न तो ज़िद्द की, न ही वह रोया। यहाँ कोई अंकुश न होने से बेटू को अच्छा लग रहा था। एक महीने बाद खबर आई कि बहू के दूसरा बेटा हुआ है। अम्मा की छाती पर से जैसे एक भारी बोझ उतर गया हो, वह कहतीं—"बेटू अब मेरा है। पूरी तरह मेरा है।" रामेश्वर के जाते समय अम्मा फूट-फूट कर रोई थी। उसके बाद उन्होंने बेटू को छाती से चिपका लिया।

दूसरे साल रामेश्वर नहीं आया, केवल उसकी पत्नी रमा आई, शायद बेटू को देखने। बेटू को देखकर उसका माथा ठनका। बात-बात में ज़िद्द करता। खाना दादी के हाथ से खाता, सारे दिन खाता रहता, दादी के साथ ही सोता, शाम को गली मुहल्ले के गंदे बच्चों के साथ खेलता; फेरी वाला आता, तो उससे कुछ न कुछ ज़रूर खरीदता। यह देखकर रमा बोली—'अम्मा आपने तो इसे बिगाड़ कर धूल कर रखा है। इस तरह कैसे चलेगा" अम्मा ने समझाया कि बचपन में सभी ज़िद्द करते हैं, समय आने पर सब ठीक हो जाएगा। रमा बेटू को अपने साथ ले जाना चाहती थी पर पप्पू अभी छोटा था इसलिए बेटू को साथ ले जाने का साहस नहीं जुटा सकी।

बेटू जैसे ही चार साल का हुआ रमा ने उसे नर्सरी स्कूल में दाखिला दिलाने को अम्मा को पत्र लिखा पर अम्मा इस बात को टालती रहीं। उन्हें लगा चार साल का दूध पीता बच्चा कहीं स्कूल जा सकता है?

दो साल के बाद रमा और रामेश्वर तीन साल के पप्पू को लेकर आए। पप्पू को अंग्रेजी की कविताएँ याद थीं। रमा ने रामेश्वर से बेटू को ले जाने की बात कही—"जैसे भी हो, इस बार बेटू को साथ लेकर जाना ही होगा।" रामेश्वर बोला—"अम्मा को बड़ा दु:ख होगा। फिर बेटू तुम्हारे पास जरा भी तो नहीं आता। वह अम्मा को छोड़कर कैसे रहेगा?" रमा ने रामेश्वर से कहा—"अब इनके दो दिन के सुख के लिए बच्चे का भविष्य बिगाड़ कर रख दूँ।" अम्मा ने जब रमा की बातें सुनी तो उनके पैरों तले की जमीन सरक गई। वे बोलीं—"मेरे बिना वह एक पल भी नहीं रहता ..... एकाएक मुझसे दूर कैसे रहेगा?"

रमा ने बेटू की पढ़ाई की बात की और कहा—"..... उसके साथ दुश्मनी ही निभानी है, तो रखिए इसे अपने पास।" अम्मा रमा की यह बात सुनकर फूट-फूट कर रोने लगी। फिर संयत होकर बोलीं—"ले जा बहू ले जा।" दो दिन बाद रमा बेटू को साथ लेकर चली गई। घर में अब जो भी कोई आता तो अम्मा कह देतीं कि गठिया के कारण उसने ही बेटू को ले जाने के लिए कह दिया।

तीसरे दिन औषधालय का नौकर जो रमा के साथ गया था वापस आया, तो उसने बताया कि दादी अम्मा को याद करते-करते बेटू को बुखार आ गया। रमा से वह न खाता न दवाई पीता है। अम्मा पागलों की भाँति दौड़ती हुई औषधालय में पहुँची और अपने पति को सारी बात बताई। अम्मा नौकर के साथ जाकर तीसरे दिन ही बेटू को ले आई। एक साल इसी तरह निकल गया। रमा मुंबई से आई तो बेटू का वही रवैया देखा। वह एक बार फिर दादी माँ को रुलाकर उनके मना करने पर भी बेटू को लेकर मुंबई के लिए चल पड़ी। अम्मा ने शिब्बू को साथ कर दिया।

दूसरे दिन से जो भी कोई आता, अम्मा उसी के सामने यह मनौती मानती कि किसी तरह बेटू रमा के पास हिल जाए तो, वह सवा रुपये का परसाद चढ़ाएगी।

सात दिन बाद शिब्बू लौट कर आया तो, उसने बताया, "बहू जी ने बेटू को हिला लिया है ..... खूब खेलता है ..... उसका मन लग गया है ..... चलो तुम्हारी चिन्ता दूर हुई ..... अब तो तुम परसाद चढ़ाओ, अम्मा और मजे से भजन पूजा करो।

एकाएक अम्मा की चेतना लौट आई—"क्या कहा? बेटू मुझे भूल गया? सच मेरी चिन्ता दूर हुई ..... जरूर परसाद चढ़ाऊँगी रे .....।" फिर काँपते हाथों से जेब से सवा रुपया निकालकर शिब्बू को देते हुए कहा—'ले पेड़े लेते आ, अब प्रसाद चढ़ाकर बाँट ही दूँ ....।" उन्होंने अपने आँचल से आँखें पोंछी और हँस पड़ीं।

❑❑

काव्य मंजरी

अध्याय-1
साखी

(कबीरदास)

कवि का परिचय

ऐसा विश्वास किया जाता है कि महात्मा कबीरदास का जन्म काशी में 1398 ई. (वि.सं.1455) में हुआ था। इनके जन्म स्थान के सम्बन्ध में तीन मत हैं। तदनुसार पहला मत 'मगहर' मानता है, दूसरा काशी और तीसरा मत आजमगढ़ मानने के पक्ष में है। कबीरदास जी ने स्वयं को अपने काव्य में काशी का जुलाहा कहा है। अत: इनका जन्म स्थान काशी ही निश्चित होता है।

जनश्रुति के अनुसार कबीर का जन्म सन्त रामानन्द के आशीर्वाद से एक विधवा ब्राह्मणी के गर्भ से हुआ था। माँ ने जन्म देते ही समाज और लोकलाज के भय से इन्हें लहरतारा नामक तालाब के किनारे छोड़ दिया था। नीरू और नीमा नामक सन्तानहीन दम्पत्ति को यह बालक तालाब के किनारे पड़ा मिला, जिसने उनका पालन-पोषण किया। वे ही कबीर के माता पिता कहलाए। इस प्रकार वे बचपन से ही हिन्दू और मुसलमान-दोनों के संस्कारों से प्रभावित हुए। इनका विवाह 'लोई' नामक स्त्री से हुआ, जिससे उनके कमाल नाम का पुत्र और कमाली नाम की पुत्री हुई। कबीरदास के गुरु रामानन्द थे। कहते हैं कि रामानन्द ने इनको एक जुलाहा पुत्र होने के कारण शिष्य रूप में स्वीकार करने से इन्कार कर दिया था। तब ये एक दिन गंगा घाट की सीढ़ियों पर जाकर लेट गए। रामानन्द प्रतिदिन गंगा स्नान के लिए जाया करते थे। अँधेरा होने के कारण रामानन्द इन्हें नहीं देख सके और उनका पैर इनके सीने पर पड़ गया। वे राम नाम की जाप करते हुए पीछे की ओर लौट पड़े। कबीरदास जी ने उनके पैर-पकड़ लिए और बोले, अब मुझे राम-नाम का गुरु मन्त्र मिल गया। इनकी भक्ति देखकर रामानन्द ने इन्हें शिष्य रूप में स्वीकार कर लिया। इनकी मृत्यु सन् 1495 में मगहर में मानी जाती है।

साधारण परिवार में रहने के कारण कबीरदास को अध्ययन का अवसर नहीं मिल सका। उन्होंने स्वयं स्वीकार किया है कि **"मसि कागद छुओ नहीं कलम गही नहिं हाथ"** इस प्रकार की विद्यालयी शिक्षा न मिलने पर भी उनको सत्संग और व्यापक परिभ्रमण के कारण पर्याप्त ज्ञान प्राप्त हो गया था और वे मात्र **'प्रेम का ढाई आखर'** पढ़कर पण्डित हो गए थे।

रचनाएँ—कबीरदास ने साखी, सबद, रमैनी की रचना की है। ये सभी 'कबीर ग्रंथावली' में संगृहीत है। कबीर पंथियों के अनुसार 'बीजक' ही कबीर की रचनाओं का प्रामाणिक संग्रह है। इनकी कुछ रचनाएँ गुरु ग्रंथ साहिब में भी संकलित हैं। कबीर ने 'साखी' में सदाचार संतोष, सत्संगति का प्रभु स्मरण आदि पर विशेष बल दिया है। 'सबद' में योग साधना व भक्ति साधना के पद संकलित है तथा 'रमैनी' में कबीर ने जीव, ब्रह्म व माया आदि का वर्णन किया है।

भाषा—कबीर अपनी भाषा में सूक्ष्म से सूक्ष्म भावों को व्यंजित करने में समर्थ रहे हैं। इनका भाषा पर पूरा अधिकार था। कबीर की भाषा में अरबी, फारसी, अवधी, ब्रज तथा राजस्थानी जैसी अनेक भाषाओं के शब्द मिलते हैं। इसलिए कबीर की भाषा को विद्वानों ने सधुक्खड़ी या पंचमेल खिचड़ी कहा है।

काव्यगत विशेषताएँ—कबीरदास निर्गुण ब्रह्म के उपासक थे। इसीलिए इन्होंने मूर्तिपूजा, बाह्य आडंम्बरों, कर्मकांडों तथा जाति- पाँति का विरोध किया और हिन्दू तथा मुस्लिमों को कड़ी फटकार लगाई। इन्होंने धार्मिक कुरीतियों का विरोध किया। इसीलिए इनकी साखियों व पदों में एक समाज सुधारक का निर्भीक स्वर सुनाई देता है।

परिचय—पाठ्य-पुस्तक 'काव्य मंजरी' में कबीर की दस साखियाँ संकलित हैं। इन साखियों में कबीरदास ने सतगुरु की महिमा, प्रभु या गुरु के अनुग्रह की कृपा, प्रभु विरह की व्याकुलता, प्रिय (ब्रह्म) से मिलने की तीव्र आकांक्षा, गुरु कृपा से परम तत्व के दर्शन होने, ईश्वर के (ब्रह्म के) ज्ञान से अहं की समाप्ति तथा सच्चे वैराग्य द्वारा मन को योगी की भाँति बना लेना जैसे प्रसंगों का उल्लेख किया है।

साखियों का सारांश

कबीरदास जी कहते हैं कि मैं तो लोक (संसार) और वेद को मानकर, उनकी बातों पर विश्वास कर, आगे बढ़ रहा था, पर अचानक मार्ग में मेरी सतगुरु से भेंट हुई, और उन्होंने ज्ञान रूपी दीपक मेरे हाथों में दे दिया जिससे मेरे मन का अज्ञान रूपी अँधेरा मिट गया।

कबीरदास जी कहते हैं कि गुरु कृपा या गुरु रूपी बादल हम पर ऐसे बरसा कि हमारी अंतरात्मा भी प्रेम रस में भीग गई। इसी आनंद से बाहर की प्रकृति या सम्पूर्ण वनस्पति (हमारा शरीर भी) हरी भरी हो गयी। अर्थात् जब ईश्वरीय प्रेम की वर्षा होती है तो बाहर-भीतर सब कुछ प्रेममय हो जाता है अर्थात् भक्ति अथवा ज्ञान की दृष्टि जाग जाने पर सम्पूर्ण विश्व जड़मय या दु:खमय न प्रतीत होकर ईश्वरमय और आनंद स्वरूप प्रतीत होने लगता है।

कबीरदास जी कहते हैं कि ईश्वर (निगुर्ण ब्रह्म) से बिछुड़ने पर जीव को कहीं भी सुख प्राप्त नहीं होता। न तो उसे दिन में चैन (सुख) मिलता है और न रात में। न धूप में सुख मिलता है, न छाँव में आनंद आता है। अर्थात् ब्रह्म से बिछुड़ी हुई आत्मा सदैव तड़पती रहती है, कि वह कब उस परब्रह्म से मिल सकेगी।

कबीरदास जी कहते हैं कि—हे ईश्वर (ब्रह्म) यदि आप मुझे दर्शन देना चाहते है तो, मरने के बाद दर्शन देने के बजाय उससे पूर्व ही दर्शन दीजिए, क्योंकि पारस पत्थर की तलाश में पत्थरों से रगड़ते-रगड़ते जब सारा लोहा ही समाप्त हो जाए, तो उसके बाद पारस पत्थर के मिलने का क्या फायदा? अर्थात् ईश्वर (ब्रह्म) के दर्शन जीवित अवस्था में ही होने चाहिए।

कबीरदास जी प्रभु विरह की व्याकुलता का वर्णन करते हुए कहते हैं कि ईश्वर (प्रियतम, ब्रह्म) की राह देखते देखते आँखों में अँधेरा छाने लगा है और जिह्वा पर भी राम पुकारते-पुकराते छाले पड़ गये हैं, पर अभी तक जीवात्मा का ब्रह्म से अर्थात् ईश्वर से मिलन नहीं हुआ है।

कबीरदास ने अपने हृदय की विचित्र स्थिति का वर्णन करते हुए कहा है कि यदि मैं संसार को देखकर रोता हूँ तो बल घटता है (प्रेम की शक्ति कम होती है) अगर हँसता हूँ तो ईश्वर को बुरा लगता है वो रुष्ट हो जाते हैं क्योंकि संसार तो उन्हीं की बनाई हुई कृति है। इसीलिए अन्त:करण (हृदय) में दु:ख ऐसे बैठ गया है कि वह अंदर ही अंदर से इसे खोखला कर रहा है। जैसे दीमक (घुन) के खाने से लकड़ी खोखली होती रहती है।

कबीरदास ने 'विसूरण' शब्द से जीवात्मा की ईश्वर (ब्रह्म) से मिलन की तीव्र आकांशा तथा गहरे दु:ख को व्यक्त किया है।

कबीरदास जी कहते हैं कि मैं राम (ब्रह्म) की प्राप्ति के लिए उसके विरह में पर्वत-पर्वत घूमा और उसकी याद में रो-रोकर अपने नेत्र भी खो दिये पर मुझे वह जड़ी-बूटी कहीं नहीं मिली जिससे ईश्वर की प्राप्ति हो और मेरा जीवन सफ़ल हो सके।

कबीरदास जी कहते हैं कि इस संसार में मैं अपनी वासनाओं से प्रेरित होकर मनुष्यों के अनेक रूप देखने को आया था, पर हे संतो! यहाँ पर गुरु की कृपा से अनुपम रूप (परमतत्व, अर्थात् ब्रह्म) के दर्शन हो गए अब मुझे अनेक रूपों को देखने की अभिलाषा ही नहीं रह गई।

कबीरदास जी कहते हैं कि जब तक मनुष्य के अन्दर अभिमान या अहं की भावना रहती है तब तक उसे न ईश्वर मिलते हैं, और न ही अज्ञान का अंधकार दूर हटता है। अर्थात् जब तक हृदय में अंधकार (अहं) था तब तक ईश्वर का आभास नहीं हुआ। जब ज्ञान प्राप्त हुआ तो उस ज्ञान रूपी दीपक से अज्ञान रूपी अंधकार छँट गया और ब्रह्म के दर्शन हो गए।

कबीरदास जी कहते हैं कि शरीर को आडंबरों से योगी तो सभी बना लेते हैं, पर मन से योगी अर्थात् विरक्त होने वाला (विरक्त भाव रखने वाला) कोई विरला ही है। यदि हम मन से योगी हो जाएँगे अर्थात् इंद्रियों को वश में कर पाएँगे तो सभी प्रकार की सिद्धियाँ प्राप्त हो सकती हैं।

❑❑

अध्याय-2
बाल लीला

(सूरदास)

कवि का परिचय

भक्तिकाल की सगुणधारा के कृष्णभक्त कवियों में सूरदास अग्रगण्य हैं। कवि सूरदास का जन्म सम्वत् 1535 अर्थात् सन् 1478 ई. में आगरा के समीप रुनकता ग्राम में हुआ था। महाप्रभु बल्लभाचार्य जी ने इन्हें दीक्षा प्रदान की थी और गोवर्धन स्थित श्रीनाथ जी के मंदिर में इनको कीर्तन करने के लिए नियुक्त कर दिया था। सूर नित्य नया पद बनाकर और इकतारे पर गाकर भगवान की स्तुति करते थे। सूरदास मथुरा के गऊघाट पर रहते थे। बल्लभाचार्य के पुत्र विट्ठलनाथ ने 'अष्टछाप' की स्थापना की, जिसमें सूर को स्थपित किया गया। सूर के अंधत्व को लेकर विवाद है। कुछ विद्वान इन्हें जन्मान्ध मानते हैं और कुछ कहते हैं कि सूरदास ने श्रीकृष्ण की लीलाओं का जो सूक्ष्म अंकन किया है और रूप-रंग की जो कल्पनाएँ की हैं, उसके आधार पर उनका जन्मान्ध होना असम्भव-सा प्रतीत होता है। सूरदास की मृत्यु मथुरा के निकट 'पारसोली' नामक ग्राम में सम्वत् 1640 अर्थात् सन् 1583 ई. के लगभग हुई।

रचनाएँ—ऐसा माना जाता है कि सूरदास जी ने अपने जीवन काल में सवा लाख पदों की रचना की थी। सूरदास की रचनाओं में 'सूरसागर', 'सूर सारावली' तथा साहित्य लहरी प्रमुख हैं। 'सूरसागर' को सूरदास जी की सर्वोत्कृष्ट रचना माना गया है।

भाषा—सूरदास ने ब्रज की लोक प्रचलित भाषा 'ब्रज भाषा' को अपने काव्य का आधार बनाया है। इनकी भाषा में मधुरता व सरलता का मिश्रण है। इन्होंने अपने काव्य में अलंकारों का प्रयोग बड़ी ही स्वाभाविकता से किया है। इनके काव्य में उपमा, रूपक, उत्प्रेक्षा तथा वक्रोक्ति अलंकारों की सुन्दर छटा देखने को मिलती है। पदों की गेयता इनकी प्रमुख विशेषता है।

काव्यगत विशेषताएँ—सूरदास ने अपनी रचनाओं में श्रीकृष्ण की विविध लीलाओं का वर्णन किया है। सूरदास को तो वात्सल्य रस का सम्राट माना जाता है। इसीलिए कहा जाता है कि सूरदास वात्सल्य रस का कोना-कोना झाँक आए हैं। इन्होंने वात्सल्य रस के साथ ही साथ श्रृंगार रस के संयोग और वियोग पक्षों का भी मार्मिक तथा सजीव वर्णन किया है। इनके पदों में वात्सल्य रस का माधुर्य, भक्ति की तन्मयता और श्रृंगार के अनेकानेक सुकोमल चित्र अंकित हैं।

परिचय

पाठ्यपुस्तक काव्य मंजरी में सूरदास के तीन पद संकलित है। प्रथम पद में बालकृष्ण के घुटनों के बल चलने का सौन्दर्य, द्वितीय पद में बालकृष्ण द्वारा यशोदा माँ को पहली बार 'मैया-मैया' कहकर पुकारने का तथा तृतीय पद में बालकृष्ण को बलराम द्वारा चिढ़ाए जाने की शिकायत करने का चित्रण किया गया है।

पदों का सारांश

सूरदास कृष्ण भक्ति शाखा के प्रतिनिधि कवि माने जाते हैं। उन्होंने कृष्ण के बाल स्वरूप का बड़ा ही सुन्दर वर्णन किया है। सूरदास जी कहते हैं कि बाल कृष्ण अपने हाथ में मक्खन लिए हुए अत्यन्त सुन्दर लग रहे हैं, कृष्ण घुटनों के बल चल रहे हैं, उनका शरीर धूल से सना है तथा उनके मुख पर दही लगी हुई है। बाल कृष्ण के कपोल (गाल) सुंदर है तथा उनके नेत्र चंचल है। उनके माथे पर गोरोचन का तिलक लगा हुआ है। उनके मुख पर लटकती हुई लटें ऐसी लग रही हैं मानों मद मस्त भंवरों का समूह (झुंड) मस्त (मादक) कर देने वाले मधु (रस) का पान कर रहे हैं। उन्होंने गले में वज्र और शेर के नाखून से बना कदुला पहना हुआ है, जो कि उनके सुन्दर गले में शोभा पा रहा है। सूरदास जी कहते हैं कि श्री कृष्ण के बाल-स्वरूप का यदि एक पल भी दर्शन प्राप्त हो जाए तो वह सैकड़ों कल्पों के सुख से कहीं अधिक श्रेष्ठ तथा मनोहारी है।

दूसरे पद में बाल कृष्ण के बोलने का प्रसंग है–

बालकृष्ण अब थोड़े बड़े हो गये हैं, वे अब बोलना सीख रहे हैं। वे अब यशोदा माँ से 'मैया-मैया' कहकर पुकारने लगे हैं और नंद से 'बाबा' कहने लगे हैं तथा बलराम को 'भैया' कहकर पुकारने लगे हैं। ऊँचे स्थान पर चढ़कर यशोदा कन्हैया कहकर कृष्ण को बुलाती हैं और कहती हैं कि हे कन्हैया दूर खेलने मत जाना क्योंकि, ऐसा करने से किसी की गैया तुम्हें हानि पहुँचा सकती है।

गोपियाँ तथा ग्वाल-बाल सब आश्चर्य एवं उत्सुकता से यह दृश्य देख रहे हैं। घर-घर में बधाई के गीत गाये जा रहे हैं। सूरदास जी कहते हैं हे प्रभु! तुम्हारे दर्शन के लिए मैं तुम्हारे चरणों की बलिहारी जाता हूँ या तुम्हारे चरणों में प्रणाम कर तुम्हारे दर्शन की अभिलाषा रखता हूँ।

तीसरे पद में बाल कृष्ण अपनी माता यशोदा से अपने बड़े भाई बलदाऊ की शिकायत करते हैं और कहते है कि–बलराम (बलदाऊ) ने मुझे बहुत चिढ़ाया है। वे कहते हैं कि यशोदा माता ने तुझे जन्म नहीं दिया है तुझे तो यशोदा माता ने मोल (कुछ देकर खरीदना) लिया है। क्या करूँ? इसीलिए मैं गुस्सा होकर खेलने भी नहीं जाता हूँ। वे बार-बार मुझसे पूछते हैं कि मेरी माता और पिता कौन है? यदि तू नंद बाबा और यशोदा माँ का पुत्र है तो बता नंद बाबा गोरे हैं, यशोदा माता गौरी हैं, फिर तू साँवला कैसे हो गया? बलराम की इस बात को सुनकर सभी ग्वाल बाल चुटकी बजाकर मुझ पर हँसते हैं। कृष्ण माता यशोदा से कहते हैं कि जब देखो, तू मुझे ही डाँटती-डपटती रहती है, मैया बलराम को कभी कुछ नहीं कहती। कृष्ण के गुस्से भरे मुख की सुन्दरता देखकर और उनकी बातें सुनकर यशोदा मन ही मन प्रसन्न होती हैं। वे कृष्ण से कहती हैं–हे कृष्ण! सुनो बलदाऊ तो जन्म से ही चालाक और चुगलखोर व धूर्त है यशोदा कृष्ण को विश्वास दिलाती हैं कि हे कृष्ण! मैं गऊओं रूपी धन की सौगन्ध खाकर कहती हूँ कि मैं तेरी माता और तू मेरा पुत्र है।

❑❑

अध्याय-3
एक फूल की चाह

(सियारामशरण गुप्त)

कवि का परिचय

सियाराम शरण गुप्त हिन्दी के प्रसिद्ध साहित्यकार और राष्ट्रकवि मैथलीशरण गुप्त के छोटे भाई थे, उन पर गांधीवाद का विशेष प्रभाव रहा। इसलिए उनकी रचनाओं में सत्य, अहिंसा, करुणा की मार्मिक अभिव्यक्ति मिलती है। हिन्दी साहित्य में उन्हें एक कवि के रूप में विशेष ख्याति प्राप्त हुई लेकिन एक मूर्धन्य कथाकार के रूप में भी उन्होंने कथा-साहित्य में अपना स्थान बनाया।

सियाराम शरण गुप्त का जन्म सेठ राम चरण कनकने के परिवार में मैथलीशरण गुप्त के अनुज के रूप में चिरगाँव झाँसी में हुआ था। इनकी शिक्षा दीक्षा घर पर ही हुई। घर पर ही इन्होंने संस्कृत, अंग्रेजी, बाँग्ला, गुजराती व उर्दू जैसी भाषाओं का ज्ञान प्राप्त किया। सन् 1929 ई. में महात्मा गांधी और कस्तूरबा के सम्पर्क में आये और कुछ समय तक वर्धा आश्रम में भी रहे। सन् 1940 ई. में चिरगाँव में ही उन्होंने नेताजी सुभाषचन्द्र बोस का स्वागत किया। इनकी पत्नी तथा पुत्रों का असमय निधन हो जाने के कारण ही आप दु:ख वेदना और करुणा के कवि बन गए और साहित्य के मौन साधक बने रहे।

रचनाएँ–इनकी प्रमुख रचनाएँ इस प्रकार हैं–'मौर्य विजय' प्रथम रचना सन् 1914 में लिखी। आपकी समस्त रचनाएँ पाँच खण्डों में संकलित कर प्रकाशित की गई हैं–'आर्द्रा', 'दुर्वादल', 'विषाद', बापू तथा गोपिका इनकी मुख्य काव्य कृतियाँ हैं। इसके अतिरिक्त 'गोद',

'नारी', 'अंतिम आकांक्षा' (उपन्यास), 'मानुषी' (कहानी संग्रह), नाटक, निबन्ध आदि लगभग 50 ग्रन्थों की रचना की। सहज आकर्षक तथा भाव और भाषा की सरलता इनकी विशेषता है।

भाषा—गुप्त जी की भाषा-शैली पर घर के वैष्णव संस्कारों और गांधीवाद का प्रभाव था। उनकी भाषा अत्यन्त सरल है। वे सरल शब्दों के द्वारा ही गंभीर भावों को व्यक्त करने में प्रवीण हैं।

काव्यगत विशेषताएँ—सियाराम शरण गुप्त पर महात्मा गांधी और विनोवा भावे का बहुत प्रभाव पड़ा। अपनी कविताओं में इन्होंने समाज में व्याप्त बुराइयों तथा रूढ़ियों पर करारी चोट की है। इनकी रचनाओं में सत्य, अहिंसा, करुणा, विश्व बंधुत्व तथा गांधीवादी विचारधारा की छाप स्पष्ट है।

कविता का परिचय

'एक फूल की चाह' कविता में गुप्त जी ने समाज के अछूत माने जाने वाले एक व्यक्ति की व्यथा का चित्रण किया है, जो कि अपनी बीमार लड़की की इच्छा की पूर्ति हेतु देवी के मंदिर में एक फूल लाने पहुँच जाता है। वहाँ पहुँचकर वह प्रसाद चढ़ाता है, पर फूल लाने की जल्दी में प्रसाद लेना भूल जाता है, तभी लोग उसे पहचान लेते हैं तथा एक अछूत को मंदिर में प्रवेश करने की धृष्टता के लिए उसे पीटते हैं। उसके हाथों से वो फूल भी गिर जाता है उसे जीवन पर्यन्त इस बात का पश्चाताप रहता है कि वह अपनी बेटी की अंतिम इच्छा भी पूरी न कर सका। उसे माँ के प्रसाद का एक फूल भी लाकर नहीं दे सका।

कविता का सारांश

सुखिया का पिता अपनी पुत्री से बार-बार बाहर न खेलने जाने का आग्रह करता था, पर सुखिया का खेलना नहीं रुकता। वह पल भर भी घर में नहीं ठहरती थी। उसे बाहर जाते हुए देखकर उसके पिता का हृदय काँप उठता था और वह सोचता था कि किसी प्रकार मैं सुखिया को बचा लूँ, क्योंकि बाहर महामारी फ़ैली हुई थी। वह बार-बार यही सोचता था कि वह अपनी बेटी को उस महामारी की चपेट में आने से किस प्रकार बचाए ?

सुखिया के पिता के मन में जो भय महामारी को लेकर व्याप्त था, एक दिन वह बाहर आया। एक दिन सुखिया बेटी को तेज़ बुखार ने घेर लिया, उसकी बेटी ज्वर से बैचेन थी, तभी उसने जाने किस डर से डर-डर कर अपने पिता से कहा—कि मुझे देवी माँ के प्रसाद का एक फूल लाकर दो।

कवि कहता है कि ज्वर से ग्रसित होने के कारण सुखिया का कंठ सूख गया और सभी अंग शिथिल हो गये थे, उसका पिता अपने मन में नये-नये उपायों को सोचकर दु:खी बैठा था। उसे यह भी पता नहीं चला कि कब प्रभात से आलस लाने वाली दोपहरी हो गयी, और सूर्य कब बादलों में डूब गया और न जाने कब संध्या हो गई। सुखिया के पिता को सभी ओर अंधकार ही अंधकार दिखाई दे रहा है। उस छोटी सी बच्ची के प्राण लेने के लिए कितना बड़ा अँधेरा आया है, ऊपर विस्तृत आकाश में मानो अंगारे जल रहे हों, जिनमें उसकी आँखे झुलस रही थीं। जगमग करते हुए तारे भी उसे तपती हुई आग के सदृश्य लग रहे थे।2

कवि कहता है कि सुखिया का पिता यह देख रहा था कि मेरी बेटी जो एक क्षण भी बैठती नहीं थी ,वो आज अटल शांति को ओढ़े चुपचाप पड़ी थी। मैं उससे यह सुनना चाहता था कि मुझे देवी के प्रसाद का एक फूल ही लाकर दे दो। ऊँचे पर्वत की चोटी पर एक विशाल मंदिर था उसके ऊपर स्वर्ण कलश चमक रहे थे और सूर्य की किरणों का स्पर्श पाकर कमल खिल रहे थे। दीप-धूप के धुएँ से मन्दिर जैसे ढका हुआ लगता था। मन्दिर के भीतर और बाहर उत्सव का शोरगुल सुनाई दे रहा था।

कवि कहता है कि मंदिर में भक्तजन मधुर कंठ से भजन गा रहे थे और पापियों को तारने वाली और पापों को नष्ट करने वाली देवी की जय बोल रहे थे। पिता के मुख से भी यही शब्द निकले और पीछे से एक ऐसा धक्का आया कि वह आगे तक पहुँच गया। पुजारी ने उसका दीप और फूल देवी माँ को अर्पित करके प्रसाद उसके हाथ में दिया और उसने अपनी अंजलि में ले लिया और वह सोचने लगा कि जाकर बेटी को माता का प्रसाद दूँगा।

बच्ची (सुखिया) का पिता आँगन से दालान तक भी नहीं पहुँच पाया था, कि उसने सुना कि यह अछूत कैसे मंदिर में घुस आया? पकड़ो यह दुष्ट कहीं भाग न जाए। वह भले आदमियों की तरह साफ़ कपड़े पहनकर आया है। इस पापी ने मंदिर में घुसकर बड़ा अनर्थ कर दिया, मंदिर की पुराने समय से चली आ रही पवित्रता समाप्त कर दी। वह सोचने लगा कि क्या उसका यह पाप देवी माँ की गरिमा से भी बड़ा है?

मंदिर में गये हुए उस व्यक्ति ने माँ के भक्तों से पूछा कि तुम इतना बुरा विचार करके माँ के गौरव को छोटा करते हो। भक्तों ने उसकी एक भी बात नहीं सुनी और उस व्यक्ति को घेर कर पकड़ लिया, उसे नीचे गिराकर उसे मुक्के, घूसों से पीटा, जिससे उसके हाथ में लिए हुए फूल के रूप में माँ का प्रसाद नीचे गिरकर बिखर गया, वह सोचने लगा कि अब यह प्रसाद कैसे मेरी बेटी तक पहुँच पाएगा? दु:ख के साथ वह कहता है हे बेटी, अंतिम बार मैं तुम्हें गोद में ले न सका और माँ के प्रसाद का एक फूल भी तुझे दे न सका। यह सुखिया के पिता की करुण पुकार है।

❑❑

अध्याय-4
आः धरती कितना देती है

(सुमित्रानंदन पंत)

कवि का परिचय

प्रकृति के अनुपम चितेरे कवि सुमित्रानंदन पंत का जन्म हिमालय की गोद में बसे उत्तरांचल प्रदेश के कौसानी ग्राम में 20 मई सन् 1900 को हुआ था। जन्म के कुछ घंटों बाद ही इनकी माता का निधन हो जाने के कारण इनका लालन–पालन इनकी दादी ने किया। गाँव की पाठशाला और राजकीय हाईस्कूल अल्मोड़ा से शिक्षा प्राप्त करने के बाद काशी से मैट्रिक परीक्षा पास की। अल्मोड़ा में पढ़ते समय ही इन्होंने अपना नाम गुसाई दत्त से बदलकर सुमित्रानंदन रख लिया। इसके बाद जब ये इलाहबाद के सैण्ट्रल म्योर कॉलेज से इण्टर कर रहे थे, तभी गांधी जी के आन्दोलन से प्रभावित होकर कॉलेज छोड़ बैठे और स्वाध्याय से ही अंग्रेजी, संस्कृत और बंगला का अध्ययन किया और साहित्य साधना में संलग्न हो गए। सन् 1931 में ये कालाकांकार आ गए। सन् 1942 ई. भारत छोड़ो आन्दोलन से प्रेरित होकर 'लोकायन' नामक सांस्कृतिक पीठ की स्थापना की योजना बनाई। सन् 1950 में आकाशवाणी से सम्बद्ध हुए और प्रयाग में रहकर स्वच्छन्द रूप से साहित्य सृजन करने लगे। भारत सरकार ने इनको पदम् विभूषण की उपाधि से अलंकृत किया। इन्हें 'लोकायतन' पर सोवियत लैण्ड नेहरू पुरस्कार और 'चिदम्बरा' पर ज्ञानपीठ पुरस्कार प्राप्त हुआ। 29 दिसम्बर सन् 1977 ई. को इनका स्वर्गवास हो गया।

रचनाएँ—सुमित्रानंदन पंत की प्रमुख रचनाएँ हैं—'वीणा', 'ग्रन्थि', 'पल्लव', 'गुञ्जन', 'युगवाणी', 'ग्राम्या', 'स्वर्णकिरण', 'स्वर्णधूलि', 'युगपथ', 'उत्तरा', 'वाणी', 'कला', और बूढ़ा चाँद', 'लोकायतन' (महाकाव्य), 'चिदम्बरा', पुरुषोत्तमराम', 'पतझर', 'गीतहंस', 'गीत पर्व' आदि।

उपन्यास— 'हार'।

कहानी संग्रह— 'पाँच कहानियाँ'।

नाटक—'ज्योत्स्ना'।

आत्मकथा— 'साठ साल—एक रेखांकन'।

भाषा—सुमित्रानंदन पंत की भाषा चित्रमयी और अलंकृत है। इनकी भाषा में माधुर्य और सरसता का मणिकांचन संयोग है। इनकी छायावादी रचनाएँ अत्यन्त कोमल और मृदुल भावों को अभिव्यक्त करती हैं। इसीलिए पंत जी को प्रकृति का सुकुमार कवि कहा जाता है।

काव्यगत विशेषताएँ—सुमित्रानंदन पंत छायावादी कवि हैं, परंतु इन्होंने प्रगतिवादी और आध्यात्म से प्रभावित कविताओं का भी सृजन किया है। इन्हें 'चिदम्बरा' के लिए भारतीय ज्ञानपीठ पुरस्कार प्रदान किया गया। सुमित्रानंदन पंत के साहित्य पर गांधी दर्शन व अरविन्द दर्शन का गहरा प्रभाव पड़ा।

कविता का परिचय

'आः धरती कितना देती है' कविता में कवि (सुमित्रानंदन पंत) अपने बचपन की एक घटना का स्मरण कर रहा है। जब उसने धरती में पैसे बो दिए थे और कवि ने सोचा था कि पैसों के पेड़ उगेंगे और रुपयों की फसलें आने पर वह धनी व्यक्ति बन जाएगा। कालांतर में उसने सेम के कुछ बीज धरती में दबा दिए थे। जिसके परिणामस्वरूप सेम की बेल उगी और बेल पर बहुत–सी फलियाँ लगीं। कवि ने प्रस्तुत कविता के माध्यम से यह संदेश दिया है कि धरती रत्न प्रवासिनी है। हम जैसा बोऐंगे वैसा ही पाएँगे।

कविता का सारांश

कवि ने बचपन में छिपकर कुछ पैसे मिट्टी में बो दिए और सोचा कि पैसों के पेड़ उगेंगे और रुपयों की फसलें लगेंगी, जिन पर खूब पैसे लगेंगे और मैं खूब अमीर हो जाऊँगा और मोटा सेठ बन जाऊँगा, पर कवि की यह उम्मीद पूरी नहीं हुई क्योंकि बंजर धरती में एक भी अंकुर नहीं फूटा, अनुपजाऊ मिट्टी ने एक भी पैसा न उगला। कवि के सारे सपने नष्ट हो गए। वह हताशा से उद्विग्न था फिर भी बहुत दिनों तक उसने प्रतीक्षा की। कवि पलक पाँवड़े बिछाये उन पैसों के बीजों से रुपयों के पेड़ उगने का इंतजार करता रहा। वह अज्ञानी और अबोध था उसने अपनी अज्ञानतावश गलत बीजों को बोया था। अनुचित बीजों की बुवाई से कवि ने लालच का रोपण किया था और तृष्णा (तीव्र इच्छा) का पानी लगाकर ममता का सिंचन किया था।

कवि कहता है कि बचपन की घटना के बाद समय बदला और जीवन के पचास वर्ष ऐसे ही निकल गए। कितने ही बसंत, पतझड़, ग्रीष्म, वर्षा, शरद और हेमन्त ऋतु बारी–बारी से आती और जाती रहीं। पेड़ों के पत्ते गिरे और वन खिल गए। जब फिर से सुगन्ध (सुन्दर) लालसा

लिए धरती पर कजरारे बादल बरसे तो कवि ने जिज्ञासावश अपने आँगन में मिट्टी की गीली तह को अपनी अँगुली से सहलाकर उसमें सेम के कुछ बीज दबा दिए। कवि को ऐसा लगा मानो उसने भूमि के अंचल में मणि-माणिक्य बो दिए हों। कवि इस छोटी सी घटना को भूल गया। क्योंकि यह छोटी सी बात (सेम के बीज मिट्टी में बोने की) ऐसी नहीं थी जिसे याद रखा जाता, वह उस बात को भूल गया, किन्तु एक दिन कवि शाम के समय अपने आँगन में टहल रहा था, तभी उसने अत्यन्त आश्चर्य और प्रसन्नता से भरकर देखा कि आँगन में जहाँ उसने सेम के बीज बोए थे वहाँ कुछ छोटे-छोटे नए मेहमान खड़े हुए हैं।

यह देखकर कवि को ऐसा लगा मानो कई छोटे-छोटे अतिथि अपने सिर पर छतरी ताने खड़े हुए हों। कवि सोचता है कि उनकी पंक्तियों को विजय पताका कहें या उनकी खुली हथेलियाँ कहें। जो भी हो वे भी प्रसन्नता से भरे हुए लग रहे थे। ऐसा लग रहा था मानो वे अण्डे तोड़कर निकले चिड़ियों के बच्चे जैसे पंख लगाकर उड़ना चाहते हैं। कवि क्षण भर अपलक उन्हें देखता रहा। फिर उसे याद आया कि कुछ दिन पहले उसने अपने आँगन के एक कोने में कुछ सेम के बीज रोपे थे और यह उन्हीं बीजों से उगी छोटे-छोटे पौधों की पलटन है। जोकि उसकी आँखों के सामने गर्व से खड़ी है,और बौने पौधों की वह फ़ौज अपने छोटे-छोटे पैरों से मार्च करती हुई आगे बढ़ रही है। कवि उन्हें देखता रहा, वह बेल अनगिनत पत्तों से लद गई और उसने झाड़ी का रूप ले लिया, उसे देखकर ऐसा लगता मानो कई हरे भरे मुलायम शामियाने तान दिये गए हों। कवि ने आँगन में घेर के लिए बांसों की टटिया बनाई थीं, उसका सहारा लेकर हरे-हरे अनेक अंकुर ऊपर की ओर बढ़ रहे हैं। कवि यहाँ पर वंश के बढ़ने को देखकर दंग रह गया।

सेम की बेल पर खिलने वाले फूलों को देखकर लगा कि सेम के वे फूल छोटे तारों की तरह छिटके हुए हैं या फूलों के छींटे हैं जो कि श्याम रंग की लहराती बेल पर झागों की तरह लिपटे हैं। समय आने पर सेम की उन बेलों पर बहुत सी फलियाँ लगीं, कवि प्रसन्न होता है कि यह धरती माता अपने पुत्रों के लिए कितना देती है। वह कहता है कि बचपन में वह मिट्टी के महत्त्व को नहीं समझ पाया था। स्वार्थ और लोभवश उसने कुछ पैसे बीजों के रूप में रोप दिए थे।

कवि कहता है कि अब उसकी समझ में आ गया कि धरती माता रत्न प्रदान करने वाली है। इसमें पैसों के बीज न बोकर हमें इस धरती में ममता के बीज बोने हैं, जिससे इसमें मानवता की सुनहरी फ़सलें उगाई जा सकें। कवि का आशय है कि हमें समता, ममता आदि के ही बीज बोने चाहिए जिससे कि इन भावों की फ़सलें ही उगें और चारों ओर मानवता का प्रसार हो सके। हम जैसा बोऐंगे, वैसा ही पाएँगें। हम जिस प्रकार के भावों की सृष्टि करेंगे, उसी के अनुरूप हमें फल प्राप्त होंगे।

❑❑

अध्याय-5
नदी के द्वीप

(अज्ञेय)

कवि का परिचय

सच्चिदानंद हीरानंद वात्स्यायन 'अज्ञेय' का जन्म 7 मार्च, 1911 को उत्तर प्रदेश के देवरिया जनपद के कसिया नामक ग्राम में हुआ। इनके पिता का नाम हीरानंद शास्त्री था, जो कि विख्यात पुरातत्ववेत्ता थे। इनका बचपन अनेक स्थानों में बीता। सन् 1929 में इन्होंने बी. एस-सी. की परीक्षा पास की तथा एम. ए. अंग्रेजी में प्रवेश लिया, पर क्रान्तिकारियों के सम्पर्क में आ जाने के कारण इन्हें एम. ए. की पढ़ाई बीच में ही छोड़नी पड़ी। इन्हें कई बार जेल की यात्रा भी करनी पड़ी। अज्ञेय प्रयोगवाद एवं नई कविता को साहित्य जगत में प्रतिष्ठित करने वाले कवि हैं। बहुआयामी व्यक्तित्व के एकान्तमुखी प्रखर कवि होने के साथ-साथ वे एक अच्छे फोटोग्राफर और सत्यान्वेषी पर्यटक भी थे। इन्होंने कुछ वर्षों तक आकाशवाणी और सेना में कार्य किया। इन्होंने अनेक पत्र-पत्रिकाओं का सम्पादन भी किया। 4 अप्रैल, 1987 को इनका निधन हो गया।

रचनाएँ—अज्ञेय जी को एक प्रतिभासम्पन्न कवि, शैलीकार, कथा साहित्य को एक नया और महत्त्वपूर्ण मोड़ देने वाले कथाकार, ललित निबन्धकार, सम्पादक और सफल अध्यापक के रूप में जाना जाता है। इनकी कविता और गद्य दोनों क्षेत्रों की प्रमुख रचनाएँ इस प्रकार हैं—

काव्य—'अरी ओ करुणा प्रभामय', 'आँगन के पार द्वार', 'बावरा अहेरी', इत्यलम', कितनी नावों में कितनी बार', 'हरी घास पर क्षणभर, 'इन्द्रधनुष रौंदे हुए थे', 'पहले मैं सन्नाटा बुनता हूँ', 'सुनहरे शैवाल' आदि।

कहानी संग्रह—'विपथगा', 'परम्परा', 'कोठरी की बात', 'शरणार्थी', 'जयदोल'।

उपन्यास—'शेखर एक जीवनी'।

यात्रा वृक्रांत—'अरे यायावर याद रहेगा' आदि।

काव्यगत विशेषताएँ—अज्ञेय जी को हिन्दी साहित्य में 'प्रयोगवाद' और 'नई कविता' का प्रवर्तक माना जाता है। इनकी रचनाओं में बौद्धिक तत्व की प्रधानता है तथा प्रेम सौन्दर्य, प्रकृति चित्रण, वैयक्तिकता तथा राष्ट्रीय भावनाओं की झलक भी मिलती है। 'कितनी नावों में कितनी बार' नामक काव्य ग्रन्थ पर इन्हें ज्ञानपीठ पुरस्कार से सम्मनित किया गया।

कविता का परिचय

'नदी के द्वीप' अज्ञेय जी द्वारा रचित एक प्रतीकात्मक कविता है, जिसमें व्यक्ति, समाज और परम्पराओं के पास्परिक संबंधों को सर्वथा नवीन दृष्टि से देखा गया है। यह कविता 'हरी घास पर क्षण भर' नामक काव्य संग्रह से ली गई है।

प्रस्तुत कविता में 'द्वीप' को व्यक्ति का 'नदी' को परम्परा का तथा 'भूखंड' को समाज का प्रतीक बताया गया है। परिचय ही समाज और व्यक्ति को मिलाती है जिस प्रकार से 'द्वीप' 'भू' का ही एक खण्ड है किन्तु नदी के कारण उसका अस्तित्व अलग है, उसी प्रकार व्यक्ति भी समाज का अंग है, किन्तु सामाजिक परम्पराएँ उसे विशिष्ट व्यक्तित्व प्रदान करती हैं।

कविता का सारांश

कवि कहता है कि हमारी स्थिति नदी के द्वीप की तरह है। हम नहीं कहते कि नदी द्वीप को छोड़कर बह जाए क्योंकि नदी ही द्वीप को आकार प्रदान करती है, निर्माण करती है। द्वीप के कोण, उसके मध्य का उठान, उसके मार्ग, बालू के किनारे, उसकी गोलाकार आकृति ये सभी नदी की ही देन है। यदि नदी नहीं होती तो इन सबका होना संभव नहीं होता।

नदी हमारी माँ है क्योंकि हमारा अस्तित्व नदी के कारण से ही है। द्वीप को नदी से अलग नहीं किया जा सकता। नदी से ही द्वीप का जन्म होता है। द्वीप कभी भी नदी की प्रवाहित होने वाली धारा नहीं बन सकते। द्वीप का अस्तित्व स्थिर रहते हुए त्याग की भावना में है। वे सदैव नदी के द्वीप ही कहलाते हैं वे नदी की गति के साथ नहीं चलते, यदि वे नदी के साथ प्रवाहित हो जाएँगे तो स्वयं रेत बन जाएँगे और उनका अस्तित्व ही समाप्त हो जाएगा। यदि द्वीप अपने स्थान से डिग जाएँगे तो सभी स्थान जलमग्न हो जाएगा अर्थात् सभी स्थान जल से पूर्ण हो जाएँगे; इनके किनारे कट-छटकर गिरेंगे जिसे उन्हें सहन करना पड़ेगा, यदि वे पूर्ण हो जाएँ तो भी नदी की धारा नहीं बन सकते। रेत बनने के पश्चात् भी ये द्व ीप नदी को गंदा ही करेंगे, नदी का जल पीने के योग्य नहीं रहेगा—अर्थात् व्यक्ति का अस्तित्व समाज के अनुरूप चलने में है, समाज के विपरीत चलने में उसका कोई अस्तित्व नहीं है। समाज के हित में कार्य करने से ही व्यक्ति के व्यक्तित्व का विकास होता है, व्यक्ति को चाहिए कि वह अपनी विकृतियों को समाज में फैलने न दे तभी सामाजिक परिवेश दूषित होने से बचेगा।

कवि कहता है कि द्वीप बनना कोई अभिशाप नहीं है। यह तो उनका भाग्य है कि वे नदी के पुत्र हैं तथा उसकी बीच धारा अर्थात् नदी की गोद में बैठे हैं। नदी द्वीप के अस्तित्व को शेष भू-भाग से जोड़ती है। इस विशाल भूभाग से ही उनका जन्म हुआ है, अत: यह भू-भाग ही उनके पिता के समान है अर्थात् व्यक्ति को समाज ने ही मानवीय गुण प्रदान किये हैं और समाज ही व्यक्ति के व्यक्तित्व का निर्माण करता है। समाज के बीच में ही मनुष्य रहता है इसीलिए ये समाज ही उसका निर्माता है।

❑❑

अध्याय-6
तुलसीदास के पद

(तुलसीदास)

कवि का परिचय

लोकनायक तुलसीदास जी के जन्म के सम्बन्ध में विद्वानों में मतभेद पाया जाता है। इनके जन्म के सम्बन्ध में एक दोहा प्रचलित है—

पन्द्रह सौ चौवन बिसै, कालिंदी के तीर।
श्रावण शुक्ला सप्तमी, तुलसी धर्‌यो शरीर।।

अर्थात् 1554 वि. (सन् 1497) में श्रावण महीने की सप्तमी के दिन तुलसीदास जी का जन्म हुआ था। 'तुलसीचरित' में इनके जन्म के सम्बन्ध में माना जाता है कि तुलसीदास का जन्म उत्तर प्रदेश के बाँदा जिले के राजापुर गाँव में सन् 1532 में हुआ था। कुछ विद्वान इनका जन्म स्थान सोरों, जिला एटा (उत्तर प्रदेश) भी मानते हैं। तुलसी का जीवन बहुत कठिनाइयों में बीता। जीवन के प्रारम्भिक दिनों में ही इनके माता-पिता का देहान्त हो गया था। नरहरिदास इनके गुरु थे। ऐसा माना जाता है कि इनका विवाह एक ब्राह्मण कन्या रत्नावली के साथ हुआ। ये अपनी पत्नी के रूप सौन्दर्य पर अत्यधिक आसक्त थे, इसीलिए इनकी पत्नी ने एक बार इनकी बहुत भर्त्सना की, जिससे ये प्रभु भक्ति की ओर उन्मुख हो गए। इनकी मृत्यु संवत् 1680 (सन् 1623) में काशी में हुई।

रचनाएँ—महाकवि तुलसीदास एक उत्कृष्ट कवि ही नहीं, महा लोकनायक व तत्कालीन समाज के दिशा निर्देशक भी थे। तुलसीदास एक समन्वयादी कवि थे। इनकी प्रमुख रचनाएँ इस प्रकार हैं—'रामचरितमानस', 'कवितावली', 'गीतावली', 'विनय पत्रिका', 'दोहावली', 'कृष्ण गीतावली', 'रामलला नहछू' आदि इनकी प्रमुख रचनाएँ हैं।

भाषा—तुलसीदास ने अवधी तथा ब्रज दोनों भाषाओं में काव्य रचनाएँ की हैं। 'रामचरितमानस' की भाषा अवधी है तथा 'कवितावली' और 'गीतावली' की भाषा ब्रज है।

काव्य-सौन्दर्य—तुलसीदास ने अपनी रचनाओं में भक्ति, नीति, त्याग सदाचार जैसे उदात्त आदर्शों को प्रतिष्ठित किया है। 'रामचरितमानस' का प्रमुख छन्द चौपाई है। बीच-बीच में दोहों और सोरठों का भी प्रयोग किया गया है। 'विनय पत्रिका' में पद तथा कवितावली में कवित्व एवं सवैयों का प्रयोग किया गया है। इनके काव्य में ज्ञान भक्ति और वैराग्य की त्रिवेणी प्रवाहित होती है।

पदों का परिचय

पाठ्यपुस्तक काव्य मंजरी में तुलसीदास के तीन पद संकलित हैं, जिनमें दो 'कवितावली' से तथा एक 'विनयपत्रिका' से लिया गया है।

प्रथम पद में तुलसीदास जी ने श्रीराम और सीता के दूल्हा और दुल्हन रूप का वर्णन किया है। वे दोनों बड़े ही सुन्दर लग रहे हैं।

दूसरा पद राम के वन गमन से सम्बन्धित है, तथा तीसरे पद में तुलसीदास ने अपनी भक्ति भावना को प्रकट किया है।

कविता का सारांश

तुलसीदास श्रीराम के दूल्हा तथा सीता के दुल्हन के रूप का वर्णन करते हुए कहते हैं कि सुन्दर राजमहल में श्रीराम दूल्हा बने और सीताजी दुल्हन बनी बैठी हैं। समस्त सुन्दर स्त्रियाँ गीत गा रही हैं। युवा विप्र (ब्राह्मण) मिलकर वेद मन्त्रों का मधुर उच्चारण कर रहे हैं। उस अवसर पर सीता जी अपने हाथ में पहने हुए कंगन के नग में श्री राम के सुन्दररूप की परछाईं देखकर प्रसन्न हो रही हैं। वे श्रीराम के रूप की सुन्दरता देखकर सभी सुध भूल गईं अर्थात् उनका मन श्रीराम की शोभा में लीन हो गया। वे अपने हाथ को वहीं रखे रही और एकटक श्रीराम के रूप-सौन्दर्य को निहार रही हैं, अर्थात् अपनी पलकें भी नहीं झपकाती हैं।

जब राम को वन जाने की आशा मिली तो उन्होंने तुरन्त ही वनवासी का वेश धारण कर लिया। तुलसीदास ने राम के वनवासी रूप का वर्णन करते हुए कहा कि श्रीराम को राजसी वस्त्रों, आभूषणों तथा राजपाट से कोई मोह नहीं था। उन्होंने अपने वस्त्रों, आभूषणों का उसी प्रकार त्याग कर दिया जिस प्रकार तोता अपने मुलायम पंखों का त्याग कर देता है। श्रीराम द्वारा वस्त्राभूषण त्याग देने पर उनका शरीर ऐसे सुशोभित हुआ जैसे काई को हटाने पर जल। जब तक ये अयोध्या में रहे तब तक माता-पिता, प्रिय लोग सभी ने इनसे प्रेम किया और इनका सम्मान किया। दो दिन (वह अवधि जब तक राम, सीता, लक्ष्मण अयोध्या में रहे) तक ये अयोध्या में रहे तो इनका मेहमानों की तरह आदर-सत्कार किया गया। कमल के समान सुन्दर नेत्रों वाले श्रीराम अपने पिता के राज्य को छोड़कर इस प्रकार चल दिये जिस प्रकार कोई पथिक विश्राम करने के पश्चात् उस स्थान को निर्लेप भाव से छोड़कर चल देता है।

तुलसीदास जी भगवान श्रीराम से प्रार्थना करते हुए कहते हैं कि हे प्रभो ! मैं आपके चरणों को छोड़कर कहाँ जाऊँ? संसार में 'पतित पावन' नाम और किसका है? और आपकी तरह दीन-दुखियारे लोग किसे बहुत प्यारे हैं?

आज तक किस देवता ने अपने यश या कीर्ति की रक्षा करने के लिए हठपूर्वक चुन-चुनकर पतितों एवं नीचों का उद्धार किया है? हे प्रभु ! आपकी तरह किस देवता ने पक्षी (जटायु), मृग (मारीच), ब्याध (वाल्मीकि), पषान (अहिल्या) जड़वृक्ष (यमलार्जुन) और यवनों का उद्धार किया है?

हे नाथ ! देवता, दैत्य, मुनि, नाग, मनुष्य आदि सभी माया के वश में बँधे हुए हैं। जो स्वयं बँधा हुआ है, वह दूसरों के बन्धन कैसे खोल सकता है, इसलिए मैं स्वयं को उन लोगों के हाथों सौंपकर क्या करूँ? अत: मैं आपकी शरण में आया हूँ।

❑❑

अध्याय-1
जाग तुझको दूर जाना है

(महादेवी वर्मा)

लेखिका का परिचय

महादेवी वर्मा एक कवयित्री के रूप में विलक्षण प्रतिभा की धनी थीं। इनके काव्य की विरह-वेदना अपनी भावात्मक गहनता के लिए अद्वितीय समझी जाती है। प्रसिद्ध समालोचकों ने इन्हें 'आधुनिक युग की मीरा' के नाम से सम्बोधित किया है।

महादेवी वर्मा का जन्म 24 मार्च सन् 1907 में होली के दिन फ़र्रुखाबाद (उत्तर प्रदेश) में हुआ था। इनके पिता श्री गोविन्द सहाय इन्दौर में एक कॉलेज में अध्यापन करते थे। इनकी माता हेमरानी साधारण कवयित्री थीं तथा इनके नाना भी ब्रजभाषा में कविता किया करते थे। माता एवं नाना के इन्हीं गुणों का प्रभाव महादेवी जी पर भी पड़ा।

महादेवी वर्मा जी ने अपनी आरम्भिक शिक्षा इंदौर तथा उच्च शिक्षा प्रयाग विश्वविद्यालय, इलाहाबाद में पाई। महादेवी जी का कार्य-क्षेत्र लेखन, सम्पादन और अध्यापन रहा। इन्होंने कवयित्री, लेखिका और चित्रकार इन तीनों रूपों में प्रसिद्धि प्राप्त की। हिन्दी की खड़ी बोली कविता में कोमल शब्दावली का विकास महादेवी जी ने किया जो अब तक केवल ब्रज भाषा में ही सम्भव माना जाता था। उनके सम्पूर्ण गद्य साहित्य में वेदना एवं पीड़ा के दर्शन होते हैं। इनका देहान्त 11 सितम्बर, 1987 को हुआ।

रचनाएँ—कविता संग्रह—'नीहार', 'रश्मि', 'नीरजा', 'सांध्यगीत', 'दीपशिखा', 'सप्तपर्णा', 'अग्निरेखा', 'परिक्रमा', 'आत्मिका', 'साधिनी', 'यामा', 'गीत पर्व', 'स्मारिका', 'प्रथम आयाम' और नीलांबरा।

रेखाचित्र—'स्मृति की रेखाएँ' और 'अतीत के चलचित्र'।

संस्मरण—'मेरा परिवार' और 'पथ के साथी'

निबन्ध—'शृंखला की कड़ियाँ', 'विवेचनात्मक गद्य', 'संकल्पिता और साहित्यकार की आस्था तथा अन्य निबन्ध।

ललित निबन्ध—'क्षणदा'।

प्रशस्ति—'भारतीय ज्ञानपीठ पुरस्कार', सेकसरिया पुरस्कार, मंगला प्रसाद पुरस्कार।

भाषा—महादेवी वर्मा की भाषा तत्सम प्रधान है, जिसमें चित्रात्मकता का गुण भी विद्यमान है।

काव्यगत विशेषताएँ—करुणा और भावुकता महादेवी जी के गीतों की प्रमुख विशेषता है। इनकी रचनाओं में रहस्यवाद, वेदना तथा सूक्ष्म अनुभूतियों के कोमल भाव मुखरित हुए हैं। इन्होंने अपने काव्य में प्रकृति का बड़ा ही मनोरम चित्रण किया है।

कविता का परिचय

महादेवी वर्मा ने प्रस्तुत कविता 'जाग तुझको दूर जाना है' में मानव को जीवन पथ पर दृढ़ता, आत्मविश्वास एवं अविचल होकर बढ़ते रहने का संदेश दिया है।

कविता का सारांश

कवयित्री कहती हैं कि सदैव जागरुक रहने वाले हे पथिक! आज तेरी आँखों में आलस्य क्यों भरा है? आज तेरी वेश-भूषा भी अस्त-व्यस्त क्यों है? तू जाग! क्योंकि तुझे अभी लम्बी यात्रा करनी है, तेरा लक्ष्य अभी दूर है। अपनी मंजिल की ओर बढ़ते हुए चाहे तुझे कितनी ही बाधाओं का सामना क्यों न करना पड़े, चाहे अडिग रहने वाला हिमालय डोल उठे या शान्त रहने वाला अलसाया आकाश प्रलय के आँसू बरसाये अर्थात् भीषण वर्षा करे, चाहे प्रकाश कहीं लेशमात्र न रहे, चाहे चारों ओर घना अन्धकार छा जाए, बिजली की भयंकर चमक के साथ तूफ़ान तुझ पर टूट पड़े, पर तुझे निरन्तर आगे बढ़ते हुए विनाश और विध्वंश के बीच नव-निर्माण के चिह्न छोड़े जाना है। इसलिए हे पथिक! तुझे आलस्य का त्याग करना होगा क्योंकि तेरा लक्ष्य अभी बहुत दूर है। अत: तू जाग जा, तुझे अभी बहुत दूर जाना है।

कवयित्री कहती हैं कि सांसारिक बन्धन बहुत आकर्षक लगते हैं, परन्तु ये मोम की भाँति हैं जो अत्यन्त कोमल और बलहीन होते हैं। हे पथिक! तुझे इन समस्त बन्धनों को तोड़कर अपने लक्ष्य की ओर अनवरत बढ़ना है। क्या तुझे तितलियों के रंगीन पंखों की तरह ये सांसारिक सौन्दर्य आकर्षित तो नहीं करने लगे? तुम्हें भौरों के मधुर गुंजन की तरह सांसारिक जनों की मीठी-मीठी बातों में आकर भ्रमित नहीं होना है। तुम्हें ताजे गीले सुन्दर फूलों की तरह सुन्दर आँखों में आँसू देखकर द्रवित नहीं होना है, अपितु इस समस्त आकर्षण का मोह त्यागकर अपने लक्ष्य तक बढ़ना है और अज्ञात प्रियतम के पास पहुँचना है। हे पथिक ! कहीं ऐसा न हो कि तू अपनी ही छाया से भ्रमित हो जाए। तुझे जागना है क्योंकि तुझे अभी बहुत दूर जाना है।

कवयित्री पथिक (साधक, जीवात्मा) को अपने अज्ञात प्रियतम की ओर आगे बढ़ने की प्रेरणा देती हुई कहती हैं कि हे पथिक ! तुमने अपना बज्र जैसा कठोर हृदय आँसुओं के कण में धोकर क्यों गलाया, तूने जीवन रूपी अमृत किसे दे दिया और खुद दो घूंट मदिरा माँग लाया। संसार के झूठे सुखों के लिए अपने अमूल्य जीवन को नष्ट कर दिया।

हे पथिक! क्या तुझमें उठने वाली उत्साह रूपी आँधी, मोह एवं आलस्य रूपी मलय का तकिया लगाकर सो गई? क्या विश्व का अभिशाप आलस्य रूपी नींद के रूप में तुम्हारे पास आ गया ? हे पथिक तू अमरता का पुत्र है अर्थात् जीवात्मा, परमात्मा का अंश होने के कारण तू अमरता का उत्तराधिकारी है। तू मृत्यु को अपने हृदय में क्यों बसाना चाहता है तुझे तो अमरत्व के लक्ष्य तक पहुँचने के लिए प्रत्यनशील होना चाहिए, तू निराश एवं हताश मत हो, तेरे पास अनन्त शक्ति का स्रोत है, तुझे तो अपने अज्ञात प्रियतम के पास पहुँचना है। अत: तुझे जागना होगा क्योंकि तुझे अभी बहुत दूर जाना है।

कवयित्री कहती हैं कि साधना का मार्ग कष्टों व कठिनाइयों से भरा पड़ा है तुझे आहें भरकर इन कष्टों का वर्णन कर हताश नहीं होना चाहिए, बल्कि इन कठिनाइयों पर विजय प्राप्त करते हुए आगे बढ़ना चाहिए। हे पथिक! जब हृदय में आग होगी तभी तो आँखों में आँसू शोभा

पाएँगे अर्थात् जब तेरे हृदय में उस अज्ञात प्रियतम के लिए तड़प होगी, तेरे हृदय में जब प्रचण्ड विरहाग्नि दहकेगी, तेरी आँखों में अश्रु छलकेंगे, तभी तो तेरा प्रियतम पसीजेगा। अत: साधना के कष्ट दु:ख का कारण नहीं बल्कि प्रियतम को निकट लाने का कारण है। यदि इस रास्ते पर चलते हुए तू असफ़ल भी हो जाए या अपने लक्ष्य को प्राप्त न कर पाये तो भी निराश होने की कोई बात नहीं है क्योंकि यह ऐसा मार्ग है जिस पर होने वाली हार भी जीत के सदृश्य होती है। जिस प्रकार पतंगा जलकर भी दीपक की अमर कहानी बन जाता है अर्थात् उसका प्रेम अमरत्व को प्राप्त कर लेता है। उसी प्रकार जीवात्मा भी अविनाशी परमात्मा पर अपने को मिटाकर पुण्य तथा गौरव की अधिकारिणी बन जाती है। तुझे तो साधना के पथ पर अपनी तपस्या की कलियाँ बिछानी हैं, फूल सँजोने हैं। आग पर जलकर वे फूल भी गौरव का पात्र बनेंगे। इसलिए निराश तथा आलस्य छोड़कर तू जाग जा, तुझे बहुत दूर जाना है, तुझे तो इसी जीवन में उस अज्ञात प्रियतम को प्राप्त करना है।

❑❑

अध्याय-8
उद्यमी नर

(रामधारी सिंह दिनकर)

कवि का परिचय

जन-चेतना के गायक और क्रान्तिकारी कवि रामधारी सिंह 'दिनकर' का जन्म 30 सितम्बर सन् 1908 ई. को बिहार के मुंगेर जिले के सिमरिया नामक गाँव में हुआ। इनके पिता का नाम रवि सिंह और माता का नाम मनरूप देवी था। जब ये केवल दो वर्ष के थे तभी इनके पिता का देहान्त हो गया था। विद्यार्थी जीवन में इन्हें अनेक कष्ट झेलने पड़े। विद्यालय के लिए घर से पैदल दस मील रोज आना-जाना इनकी विवशता थी। मैट्रिक की परीक्षा में हिन्दी में सर्वाधिक अंक प्राप्त करने के कारण इन्हें 'भूदेव' स्वर्ण पदक मिला। 1932 ई. में इन्होंने पटना विश्वविद्यालय से बी.ए. की परीक्षा उत्तीर्ण की। इन्होंने कई स्थानों पर कई प्रकार की नौकरियाँ कीं। ये मुज़फ्फ़रपुर के स्नातकोत्तर महाविद्यालय में हिन्दी विभागाध्यक्ष तथा भागलपुर विश्वविद्यालय के उपकुलपति रहे। वे राज्यसभा के मनोनीत सदस्य भी रहे। 24 अप्रैल, 1974 ई. में इस काव्य मनीषी का देहान्त हो गया।

रचनाएँ—अपने राष्ट्रीय भाव से जनमानस की चेतना को नई स्फूर्ति प्रदान करने वाले राष्ट्र कवि दिनकर छायावादोत्तर काल के सर्वश्रेष्ठ कवि थे। उन्हें प्रगतिवादी कवियों में भी सर्वश्रेष्ठ समझा जाता है। दिनकर मूलत: सामाजिक चेतना के कवि थे। उनके व्यक्तित्व की छाप उनकी प्रत्येक रचना में दृष्टिगोचर होती है। उनकी प्रमुख काव्य रचनाएँ इस प्रकार हैं—'रेणुका', 'हुंकार', 'कुरुक्षेत्र', 'उर्वशी', 'रश्मिरथी', 'रसवंती', 'सामधेनी' आदि। दिनकर जी की गद्य रचनाओं में 'संस्कृति के चार अध्याय' उल्लेखनीय हैं, इन्होंने समीक्षात्मक ग्रन्थ भी लिखे।

भाषा—रामधारी सिंह दिनकर की भाषा की सबसे बड़ी विशेषता अभिव्यक्ति की सटीकता और स्पष्टता है। इनकी भाषा ओजगुण और प्रसाद गुण दोनों से ही सम्पन्न है, तथा भाषा में तत्सम शब्दों की प्रचुरता है।

काव्यगत विशेषताएँ—दिनकर जी की रचनाओं में, राष्ट्रीयता, प्रगतिशीलता, भारत के अतीत का गुणगान, प्रकृति-चित्रण, सौन्दर्य-प्रेम तथा क्रान्तिकारी भावना के दर्शन होते हैं। इन्हें उत्कृष्ट काव्य सृजन हेतु 'साहित्य अकादमी' पुरस्कार, 'द्विवेदी' पदक तथा 'ज्ञानपीठ' पुरस्कार से सम्मानित किया गया तथा भारत सरकार ने इन्हें 'पद्म भूषण' की उपाधि से अलंकृत किया।

कविता का परिचय

'उद्यमी नर' राष्ट्रवादी रामधारी सिंह दिनकर की एक उद्बोधनात्मक एवं प्रेरणादायक कविता है, इस कविता द्वारा मनुष्य को कार्यरत रहने की प्रेरणा दी गई है तथा भाग्य के भरोसे बैठे रहने की आलोचना की गई है। कवि ने कहा है कि आज संसार में जितना भी वैभव है, उन्नति तथा प्रगति हुई है, उसका एकमात्र कारण है 'मनुष्य का श्रम।'

कविता का सारांश

राष्ट्रकवि रामधारी सिंह दिनकर मनुष्य को कर्मरत रहने की प्रेरणा देते हुए कहते है कि इस संसार में प्रकृति के भीतर अनंत धन सम्पत्ति एवं धन-धान्य छिपा है। इससे सभी नर-नारी इच्छानुसार सुख का भोग कर सकते हैं, सभी की इच्छाएँ पूर्ण हो सकती हैं, सभी को संसार के सभी सुख प्राप्त हो सकते हैं यदि वे चाहें तो इस धरती को स्वर्ग बना सकते हैं।

ईश्वर ने सभी मुख्य तत्वों को पृथ्वी के आवरण के नीचे छिपा दिया है, जिसे परिश्रमी और जुझारू मनुष्यों ने अपने परिश्रम से खोज निकाला है। मनुष्य ऊपर से ब्रह्मा के हाथ से कुछ लिखवाकर नहीं लाया है, बल्कि उसने जो कुछ भी प्राप्त किया है अपने परिश्रम से अपनी भुजाओं की शक्ति से एकत्रित किया है।

कवि कहता है कि प्रकृति कभी भाग्य के बल से डरकर नहीं झुकती, वह तो सदा परिश्रम करने वालों से भयभीय रहती है। अर्थात् परिश्रमी मनुष्य ही धरती से अपनी अपनी इच्छित वस्तुएँ ले सकता है। जो परिश्रम नहीं करते वे भाग्य का रोना रोते रहते हैं लेकिन परिश्रमी मनुष्य अपने बुरे भाग्य को भी अपने परिश्रम के बल से बदल देते हैं अर्थात् अच्छा कर देते हैं।

कवि भाग्य के भरोसे बैठे रहने की आलोचना करते हुए कहता है कि भाग्यवाद तो पाप का आवरण है तथा शोषण करने का शस्त्र है। कवि कहता है कि यदि हम किसी भाग्यवादी मनुष्य से पूछें कि यदि भाग्य में लिखा है तो यह पृथ्वी अपने आप अन्दर दबे हुए रत्नों को उगलकर बाहर क्यों नहीं कर देती? उन्हें प्राप्त करने के लिए परिश्रम क्यों करना पड़ता है?

कवि कहता है कि मनुष्य का परिश्रम प्रबल है। धरती को जल से सींचकर मनुष्य उससे धनधान्य तथा फल उत्पन्न करता है। यदि भाग्य की प्रबलता होती तो वह बिना परिश्रम किये ही पृथ्वी से धन सम्पदा प्राप्त कर लेता।

किन्तु वास्तविकता तो यह है कि भाग्य शोषण करने का शस्त्र है क्योंकि भाग्य का नाम ले लेकर कुछ धनी एवं सम्पन्न व्यक्ति छल कपट से दूसरे मनुष्यों द्वारा अर्जित वस्तु का उपयोग कर लेता है अर्थात् एक व्यक्ति तो परिश्रम के बल से धन धान्य तथा वस्तुओं को इकट्ठा करता है जबकि कुछ सम्पन्न व्यक्ति भाग्य का सहारा लेकर उसके द्वारा उसी अर्जित धन का उपभोग कर लेते हैं।

कवि कहता है कि मनुष्य का यदि कुछ भाग्य है, तो वह है—भुजाओं की शक्ति। भुजाओं की इसी शक्ति के सम्मुख पृथ्वी और आकाश झुकते हैं। कवि कहता है कि जिसने भी परिश्रम किया है, उसे पीछे मत रहने दो उसे उसके परिश्रम का सुख भोगने दो। भाव यह है कि परिश्रमशील व्यक्ति को उसके परिश्रम का पूरा लाभ मिलना चाहिए।

❑❑

अध्याय-9
बादल को घिरते देखा है

(नागार्जुन)

कवि का परिचय

बाबा के नाम से प्रसिद्ध कवि नागार्जुन का वास्तविक नाम वैद्यनाथ मिश्र था। बौद्ध धर्म से प्रभावित होकर इन्होंने अपना नाम नागार्जुन रख लिया। इनका जन्म 30 जून, 1911 (जेष्ठमास की पूर्णिमा) को अपने ननिहाल सतलखा, जिला दरभंगा बिहार में हुआ था। आपकी प्रारम्भिक शिक्षा स्थानीय संस्कृत पाठशाला में हुई। इन्होंने काशी संस्कृत विश्वविद्यालय से संस्कृत की शिक्षा पूर्ण की। 1936 में आप श्रीलंका चले गये और वहीं बौद्ध धर्म की शिक्षा ग्रहण की। 1938 में वे भारत लौट आए। इन्हें संस्कृत के अलावा पाली, हिन्दी, मैथिली, पंजाबी, मराठी, गुजराती, सिंधी जैसी अनेक भाषाओं का ज्ञान था। अपनी कलम से आधुनिक हिन्दी काव्य को और अधिक समृद्ध करने वाले नागार्जुन का 5 नवम्बर सन् 1998 को ख्वाजा सराय दरभंगा, बिहार में निधन हो गया।

रचनाएँ—लोक जीवन, प्रकृति और समकालीन राजनीति उनकी रचनाओं के प्रमुख विषय रहे हैं। विषयों की विविधता और प्रस्तुती सहजता नागार्जुन के रचना संसार को नया आयाम देती है। इनकी प्रमुख रचनाएँ इस प्रकार है—'युगधारा', 'प्यासी पथराई आँखें', 'खून और शोले', 'सतरंगे पंखों वाली', 'तालाब की मछलियाँ', हजार-हजार बाहों वाली', 'रत्नगर्भा आदि' इनके उपन्यासों में—'नई पौध', 'बाबा बटेसर नाथ', 'जमानिया का बाबा' प्रमुख रहे हैं।

भाषा—नागार्जुन की भाषा संस्कृतनिष्ठ और चित्रात्मकता का गुण लिये हुए हैं।

काव्यगत विशेषताएँ—इनके काव्य में प्रकृति-प्रेम, जीवन के उतार-चढ़ाव, सुख-दु:ख तथा मानववादी दृष्टिकोण की प्रधानता है। अपनी मातृभाषा मैथिली में वे यात्री नाम से रचना करते थे। मैथिली में नवीन भावबोध की रचनाओं का प्रारम्भ उनके महत्त्वपूर्ण कविता-संग्रह 'चित्र' से माना जाता है। नागार्जुन ने संस्कृत तथा बांग्ला में भी काव्य रचना की है। सन् 1968 में इन्हें मैथिली में साहित्य अकादमी पुरस्कार तथा 1988 में 'मैथिलीशरण गुप्त सम्मान' और 'भारत-भारती' पुरस्कार से सम्मानित किया गया।

कविता का परिचय

प्रस्तुत कविता 'बादल को घिरते हुए देखा है' नागार्जुन ने चित्रात्मक शैली में बादलों में घिरने के वातावरण के साथ-साथ प्राकृतिक छटा का शब्द-चित्र उपस्थित किया है। कवि ने बौद्ध धर्म ग्रहण करने के बाद सन् 1939 में तिब्बत की यात्रा की थी। उसी समय उन्होंने प्रस्तुत कविता की रचना की थी। वहाँ के अनुपम सौन्दर्य ने कवि को रचना करने के लिए बाध्य कर दिया।

कविता का सारांश

कवि कहता है कि स्वच्छ एवं श्वेत पर्वत शिखरों पर, वर्षा से मंडित पर्वत की चोटियों पर घिरते हुए बादलों के मनमोहक सुन्दर दृश्य को देखा है। मैंने मानसरोवर झील में खिलने वाले सोने जैसे कमल पुष्पों पर मोती के समान चमकदार अत्यधिक शीतल जल की बूँदों (ओस के कणों) को गिरते हुए देखा है।

कवि कहता है कि उस पर्वत प्रदेश में हिमालय के ऊँचे शिखर रूपी कंधों पर छोटी-बड़ी कई झीलें फ़ैली हुई है। मैंने उन झीलों के नीचे शीतल स्वच्छ तथा निर्मल जल में गर्मी की तपन के कारण व्याकुल और समतल क्षेत्रों से आए (मैदानी भागों से आए)। हंसों को कसैले मधुर कमलनाल के तन्तुओं को खोजते हुए, उन झीलों में तैरते हुए देखा है। मैंने बादलों को घिरते हुए देखा है।

कवि हिमालय के मनमोहक दृश्यों को चित्रित करते हुए कहता है कि वसंत ऋतु के प्रभात के समय, मंद-मंद वायु बह रही थी। पर्वत की चोटियों पर बाल सूर्य की किरणें पड़ रही थीं, तभी मैंने चकवा-चकवी को, जिन्हें चिरकाल से शापित होने के कारण रात होते ही एक-दूसरे से अलग हो जाना पड़ता है, और वे विरहित हो क्रन्दन करने लगते हैं और प्रातःकाल होते ही उनका क्रन्दन बन्द हो जाता है मानसरोवर के किनारे शैवाल रूपी हरी दरी पर प्रणय-कलह (क्रीड़ा) करते हुए देखा है। मैंने बादल को घिरते हुए देखा है।

कवि कहता है कि हिमालय के दुर्गम और बर्फीले प्रदेश में सैकड़ों फीट की ऊँचाई पर अलकनंदा के किनारे घूमते हुए कस्तूरी मृग अपनी ही नाभि से उठती हुई सुगन्ध की तीव्र गन्ध से पागल होकर इधर-उधर उसे ढूँढ़ने दौड़ता रहता है और अपने आप से ही चिढ़ता रहता है; क्योंकि उसे वह सुगन्ध कहीं से प्राप्त नहीं हो पाती।

हिमालय प्रदेश के सौन्दर्य का वर्णन करते हुए कवि कहता है कि इसी हिमालय पर धन के स्वामी कुबेर का निवास स्थान माना जाता है, पर आज उसका कोई अता-पता नहीं है, आज कुबेर की राजधानी अलकापुरी का भी कोई चिन्ह शेष नहीं है। इसी प्रकार कालीदास द्वारा अर्जित वर्णित मेघदूत का कहीं कोई अता-पता नहीं है। कवि कहता है कि जाने दो 'मेघदूत' तो कवि की कल्पना थी, पर आज वह कहीं भी नहीं दिखता। कवि प्रश्न करता है कि हो सकता है कहीं बरस पड़ा हो, पर मैंने तो भीषण जाड़ों में कैलाश की ऊँची-ऊँची चोटियों पर मेघों को आँधी-तूफ़ान से गरज-गरज कर भिड़ते देखा है। मैंने तो बादलों को घिरते हुए देखा है।

किन्नर प्रदेश की शोभा का वर्णन करते हुए कवि कहता है कि सैकड़ों झरने तथा नदियों के स्वर से परिपूर्ण देवदारू के वृक्षों के वनों में लाल भोज पत्रों से बनी कुटियों में रंग-बिरंगे तथा सुगंधित फूलों से अपने बालों को सजाए हुए किन्नर और किन्नरियाँ दिखाई देते हैं। इनके गले शंख जैसे सुन्दर हैं, जिसमें इन्द्रजीत मणियों की माला डली हुई हैं। ये कानों में नीलकमल तथा चोटी में लाल कमल धारण किए हुए हैं।

कलात्मक ढंग से चाँदी से निर्मित तथा मणियों से जड़ित पात्र शोभित हैं, ये पात्र द्राक्षासव (अंगूर की शराब) से भरे हैं और अपने-अपने सामने लाल चंदन की तिपाई पर रखे हुए दिखायी दे रहे हैं। ये सभी किन्नर और किन्नरियाँ स्वयं कस्तूरी मृग के नन्हें बच्चों की कोमल बेदाग छाल पर आसन पर बैठ जाते हैं और मदिरापान करने के कारण उनके नेत्र लाल रंग के हो जाते हैं और उनमें उन्माद छा जाता है।

मदिरापान करने के बाद वे लोग मस्ती को प्रकट करने के लिए अपनी कोमल और सुन्दर अंगुलियों से सुमधुर स्वरों में वंशी की तान छेड़ते हैं। कवि कहता है कि इन नयनाभिराम और मनोहारी दृश्यों को मैंने देखा है। मैंने बादल को घिरते देखा है।

❑❑

अध्याय-10
अँधेरे का दीपक

(हरिवंश राय बच्चन)

कवि का परिचय

श्री हरिवंशराय बच्चन का जन्म 27 नवम्बर सन् 1907 को इलाहाबाद के प्रतापगढ़ जिले के बाबूपट्टी नामक गाँव में एक कायस्थ परिवार में हुआ था। इनके पिता का नाम प्रताप नारायण श्रीवास्तव और माता का नाम सरस्वती देवी था। इन्हें बाल्यकाल में 'बच्चन' के नाम से पुकारा जाता था। जिसका शाब्दिक अर्थ है– 'बच्चा' या संतान। बाद में ये इसी नाम से मशहूर हुए। इन्होंने इलाहाबाद विश्वविद्यालय से अंग्रेजी में एम.ए. तथा कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय से अंग्रेजी साहित्य के विश्व विख्यात कवि डब्ल्यू. वी. यीट्स की कविताओं पर शोध कर पीएच.डी. की उपाधि प्राप्त की। कुछ समय तक इन्होंने प्रयाग विश्वविद्यालय में अध्यापन भी किया। ये भारत सरकार के विदेश मंत्रालय में हिन्दी विशेषज्ञ के रूप में कार्यरत रहे। 18 जनवरी सन् 2003 को मुम्बई में इनका निधन हो गया।

रचनाएँ—बच्चन व्यक्तिवादी गीत कविता या हालावादी काव्य के अग्रणी कवि हैं अपनी काव्य यात्रा के आरम्भिक दौर में ये 'उमर खैयाम' के जीवन दर्शन से बहुत प्रभावित रहे। इन्होंने अपनी प्रसिद्ध कृति 'मधुशाला' उमर खैयाम की रुबाइयों से प्रेरित होकर ही लिखी। मधुशाला को मंच पर अत्यधिक प्रसिद्धि मिली और बच्चन काव्य प्रेमियों के लोकप्रिय कवि बन गए। इनकी प्रमुख रचनाएँ इस प्रकार हैं—

काव्य—मधुशाला, 1935 मधुकलश, 1939 मधुबाला, 1936 निशानिमंत्रण, एकांतसंगीत, सतरंगिनी, मिलनयामिनी, आकुल-अन्तर-बुद्ध और नाचघर, प्रणय पत्रिका, आरती और अंगार आदि।

आत्मकथा—क्या भूलूँ क्या याद करूँ, नीड़ का निर्माण फिर से, बसेरे तो दूर, दशद्वार से सोपान तक।

भाषा—हरिवंशराय बच्चन की भाषा अत्यन्त प्रवाहपूर्ण, रोचक तथा व्यावहारिक है। भाषा में कहीं कहीं तत्सम शब्दों का प्रयोग भी मिलता है, भाषा अत्यन्त सजीव एवं सरस है। इन्होंने सीधी-सादी जीवंत भाषा और संवेदन से युक्त गेय शैली का प्रयोग किया है।

काव्यगत विशेषताएँ—बच्चन जी की कविताओं में जीवन की सहज अनुभूतियाँ व्यक्त हुई हैं। ये छायावाद के आस्थावादी कवि हैं। इनके गीत अत्यन्त लोकप्रिय हैं। इनकी काव्य रचना 'दो चट्टानें' (1968) पर इन्हें 'साहित्य अकादमी' पुरस्कार प्राप्त हुआ, इसी वर्ष इन्हें सोवियत लैंड नेहरू पुरस्कार प्राप्त हुआ। भारत सरकार द्वारा सन् 1976 में इन्हें साहित्य एवं शिक्षा के क्षेत्र में 'पदम भूषण' से सम्मानित किया गया।

कविता का परिचय

हरिवंश राय बच्चन एक ऐसे कवि थे जिन्होंने अपने काव्य के माध्यम से मनुष्य के नैराश्यपूर्ण जीवन में आशा का दीपक प्रज्ज्वलित किया। प्रस्तुत कविता 'अँधेरे का दीपक' भी एक ऐसी ही कविता है। प्रस्तुत कविता में कवि ने मनुष्य को परिवर्तनों से विचलित न होने, धैर्य न खोने तथा आत्म विश्वास बनाए रखने का संदेश दिया है।

कविता का सारांश

प्रकृति सृजन व संहार का कार्य निरंतर करती रही है, इसलिए इन परिवर्तनों से विचलित होना उचित नहीं है। प्रस्तुत कविता यही सन्देश देती है। कविता में कवि कहता है कि अँधेरी रात होने पर भी दीपक जलाने की मनाही नहीं होती अर्थात् दु:खों के क्षण में भी धैर्य बनाए रखना चाहिए। कवि कहता है कि माना अपने हाथों कल्पना के जिस सुन्दर मंदिर का निर्माण हुआ था, जिस पर भावना ने अपने हाथों से चंदोवे ताने थे, स्वप्न ने अपने हाथों से जिसको सजाया संवारा था, जिसे अनेक दुष्प्राप्य रंगों से सजाया गया था, यदि वह आज ढह गया है, तो क्या हुआ। ईंट, पत्थर, कंकड़ों को जोड़कर शान्ति की कुटिया बनाने की मनाही तो नहीं है।

कवि व्यक्ति में आशावादी स्वर का संचार करते हुए कहते हैं कि बादलों के अश्रुओं (पानी की बूँदों) से नीला आकाश साफ़ दिखाई दे रहा है। नीला आकाश नीलम मणि का बनाया हुआ सुन्दर पात्र है जिसमें उषा (प्रभात) की लाल किरण रूपी लाल शराब भरी हुई है वह उस पात्र में ऐसे ही चमक रही हैं जैसे नये बादलों में बिजली चमक रही है। यदि वह मदिरा से भरा पात्र टूट गया है तो अपने हाथों की दोनों हथेलियाँ मिलाकर उस निर्मल स्रोत से प्यास बुझाना कब मना है अर्थात् सुख रूपी मदिरा का पात्र टूट जाने पर दु:ख न मनाते हुए सन्तोष रूपी प्यास को सादा जल (अन्य सुख भरे साधन) से बुझानी चाहिए। किसी से बिछुड़ जाने के पश्चात् अधिक दु:खी न होकर धैर्य धारण करना चाहिए। क्योंकि परिवर्तन सृष्टि का नियम है।

कवि कहता है कि एक समय वह था जब जीवन में किसी भी प्रकार की चिंता का नामोनिशान नहीं था। उसके चेहरे पर, कालिया (अँधेरा) तो दूर की बात है एक छाया तक उसके सामने नहीं थी। आँखों में मस्ती थी, बातों में बेपरवाही थी, हँसी ऐसी थी कि बादल भी अपनी गरज पर शरमाते थे। लेकिन जब वह (साथी, पानी) उसके जीवन से दूर चली गई, जिसे कवि ने अपनी प्रसन्नता का आधार माना था, यह तो समय की अस्थिरता है क्योंकि समय एक जैसा नहीं रहता सुख के बाद दु:ख आता है और दु:ख के बाद सुख अर्थात् हमें समय की अस्थिरता को देखकर दु:खी न होकर मुस्कुराना चाहिए क्योंकि यह सबके साथ ही होता है और होता रहेगा। अत: इस वजह से दु:खी न होकर धीरज रखना चाहिए।

कवि कहता है कि एक समय वह था जब हम मस्त होकर प्रेम प्रसंग में मस्त रहते थे और सुख वैभव को छोड़कर गीत गाते थे। एक दूसरे से मिलकर मधुर संगीत से आकाश और पृथ्वी को गुंजायमान कर दिया था। यदि उन गीतों का अन्त हो गया (या वह उसका प्रिय साथी बिछड़ गया जिसके साथ प्रेमगीत गाये थे) तो उन गीतों की अधूरी पंक्तियों को गुनगुनाना मना नहीं है अर्थात् पूर्व के सुख को अनुभव करके इस वर्तमान के समय को भी मधुर बनाने का प्रयास करना चाहिए।

कवि कहता है कि उसको ऐसा साथी मिला कि वे एक दूसरे के सम्पर्क में इस प्रकार आये जैसे चुम्बक लौहे की तरह अपनी ओर आकर्षित कर लेता है, दोनों के हृदय एक दूसरे से मिल गये उन दोनों के दिन सुख से उसी प्रकार कटने लगे जैसे वीणा के तार प्यारा संगीत निकाल रहे हों, एक ऐसा प्रिय मित्र मिला जिसने जिंदगी के गीत गाये। वह गीत मृत्यु की गोद में चला गया कि अब वह वापस कभी नहीं आएगा, तो धीरज रखकर उस दु:ख के समय को निकाल दो और फिर दूसरा कोई अपने मन का गीत खोजकर अपने मन को लगाना शुरू कर दो अर्थात् ऐसे समय में क्या तुम किसी नए साथी की खोज कर उससे लौ नहीं लगा सकते?

यह जीवन हमेशा दु:ख मनाते रहने के लिए नहीं है। जीवन के यथार्थ को समझकर प्रसन्न रहने का प्रयत्न करना चाहिए।

कवि कहता है कि कुछ ऐसी प्राकृतिक हवाएँ चलीं कि उन हवाओं ने प्यार के आशियाने को उजाड़ दिया। तुम्हारा शोर मचाना भी किसी काम नहीं आया क्योंकि प्रकृति की शक्तियों के आगे किसी का जोर नहीं चला। कवि मनुष्य को प्रेरणा देता है कि तू निर्माण का प्रतिनिधि है, इसलिए तुझे ये स्मरण रखना होगा, तथा सबको बताना भी होगा कि जो बसे हैं, वे कभी न कभी अवश्य उजड़ेंगे। यही प्रकृति का नियम है। भाव यह है कि प्रकृति में सृजन और विध्वंस का खेल लगातार चलता आया है और चलता रहेगा। इसलिए इस प्रकार के परिवर्तनों पर दु:ख मनाना ठीक नहीं है ऐसी अवस्था में किसी उजड़े हुए को फिर से बसाने का प्रयास करना चाहिए।

❑❑